B.A. Sanskrit **C. C - 5**

POETRY & HISTORY OF SANSKRIT LITERATURE -II

निर्देशकः दूर निरन्तर शिक्षा निर्देशालयः

UTKAL UNIVERSITY

NAAC ACCREDITED A+

D.D.C.E.

Education for All

ଦୂରନିରନ୍ତର ଶିକ୍ଷା ନିର୍ଦ୍ଦେଶାଳୟ, ଉତ୍କଳ ବିଶ୍ୱବିଦ୍ୟାଳୟ

DIRECTORATE OF DISTANCE & CONTINUING EDUCATION

UTKAL UNIVERSITY

सूचिपत्रम्

विषयक्रमः

Unit-I मेघदूतम् (Purvamegha)

(From beginning to *sloka* -20**)**

Unit-II मेघदूतम् (purvamegha)

(Rest of the Slokas**)**

Unit- III संस्कृत साहित्यस्य इतिहासः -:

Gītikāvyas/ Khaṇdakāvyas (Kālidāsa, Bhartṛhari, Jayadeva)

Unit- IV संस्कृत साहित्यस्य इतिहासः -:

Campu-(*Rāmāyaṇa campu, Bhārata campu, Nala campu, Nilakanṭha campu*)

Gadyakāvyas- (*Subandhu, Bāṇabhaṭṭa, & Daṇḍi*)

Kathāsāhitya-: (*Guṇādhya, Somadeva, Visnusarmā,& paṇḍita Nārāyaṇa*)

मेघदूत (पूर्वमेघ)

कालिदास (संस्कृत: *कालिदासः*) तीसरी- चौथी शताब्दी मे ुप्त साम्राज्य के संस्कृत भाषा के महान कवि और नाटककार थे।[1] उन्होंने भारत की पौराणिक कथाओं और दर्शन को आधार बनाकर रचनाएँ की और उनकी रचनाओं में भारतीय जीवन और दर्शन के विविध रूप और मूल तत्त्व निरूपित हैं। कालिदास अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण राष्ट्र की समग्र राष्ट्रीय चेतना को स्वर देने वाले कवि माने जाते हैं और कुछ विद्वान उन्हें राष्ट्रीय कवि का स्थान तक देते हैं।[2]

अभिज्ञानशाकुंतलम् कालिदास की सबसे प्रसिद्ध रचना है। यह नाटक कुछ उन भारतीय साहित्यिक कृतियों में से है जिनका सबसे पहले यूरोपीय भाषाओं में अनुवाद हुआ था। यह पूरे विश्व साहित्य में अग्रगण्य रचना मानी जाती है। मेघदूतम् कालिदास की सर्वश्रेष्ठ रचना है जिसमें कवि की कल्पनाशक्ति और अभिव्यंजनावादभावाभिव्यन्जना शक्ति अपने सर्वोत्कृष्ट स्तर पर है और प्रकृति के मानवीकरण का अद्‌भुत रखंडकाव्ये से खंडकाव्य में दिखता है।[3]

कालिदास वैदर्भी रीति के कवि हैं और तदनुरूप वे अपनी अलंकार युक्त किन्तु सरल और मधुर भाषा के लिये विशेष रूप से जाने जाते हैं।[4]

उनके प्रकृति वर्णन अद्वितीय हैं और विशेष रूप से अपनी उपमाओं के लिये जाने जाते हैं।[5] साहित्य में औदार्य गुण के प्रति कालिदास का विशेष प्रेम है और उन्होंने

अपने श्रृंगार रस प्रधान साहित्य में भी आदर्शवादी परंपरा और नैतिक मूल्यों का समुचित ध्यान रखा है।

कालिदास के परवर्ती कवि बाणभट्ट ने उनकी सूक्तियों की विशेष रूप से प्रशंसा की है।[6]

कालिदास किस काल में हुए और वे मूलतः किस स्थान के थे इसमें काफ़ी विवाद है। चूँकि, कालिदास ने द्वितीय शुंग शासक अग्निमित्र को नायक बनाकर *मालविकाग्निमित्रम्* नाटक लिखा और अग्निमित्र ने १७० ईसापूर्व में शासन किया था, अतः कालिदास के समय की एक सीमा निर्धारित हो जाती है कि वे इससे पहले नहीं हुए हो सकते। छठीं सदी ईसवी में बाणभट्ट ने अपनी रचना हर्षचरितम् में कालिदास का उल्लेख किया है तथा इसी काल के पुलकेशिन द्वितीय के एहोल अभिलेख में कालिदास का जिक्र है अतः वे इनके बाद के नहीं हो सकते। इस प्रकार कालिदास के प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व से छठी शताब्दी ईसवी के मध्य होना तय है।[7] दुर्भाग्यवश इस समय सीमा के अन्दर वे कब हुए इस पर काफ़ी मतभेद हैं। विद्वानों में (i) द्वितीय शताब्दी ईसा पूर्व का मत (ii) प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व का मत (iii) तृतीय शताब्दी ईसवी का मत (iv) चतुर्थ शताब्दी ईसवी का मत (v) पाँचवी शताब्दी ईसवी का मत, तथा (vi) छठीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध का मत; प्रचलित थे। इनमें ज्यादातर खण्डित हो चुके हैं या उन्हें मानने वाले इक्के दुक्के लोग हैं किन्तु मुख्य संघर्ष 'प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व का मत और 'चतुर्थ शताब्दी ईसवी का मत' में है।[8]

प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व का मत -

परम्परा के अनुसार कालिदास उज्जयिनी के उन राजा विक्रमादित्य के समकालीन हैं जिन्होंने ईसा से 57 वर्ष पूर्व विक्रम संवत् चलाया।[9] विक्रमोर्वशीय के नायक पुरुरवा के नाम का विक्रम में परिवर्तन से इस तर्क को बल मिलता है कि कालिदास उज्जयनी के राजा विक्रमादित्य के राजदरबारी कवि थे। इन्हें विक्रमादित्य के नवरत्नों में से एक माना जाता है।

चतुर्थ शताब्दी ईसवी का मत -

प्रो° कीथ और अन्य इतिहासकार कालिदास को गुप्त शासक चंद्रगुप्त विक्रमादित्य और उनके उत्तराधिकारी कुमारगुप्त से जोड़ते हैं, जिनका शासनकाल चौथी शताब्दी में था।[10] ऐसा माना जाता है कि चंद्रगुप्त द्वितीय ने विक्रमादित्य की उपाधि ली और उनके शासनकाल को स्वर्णयुग माना जाता है।

विवाद और पक्ष-प्रतिपक्ष -

- कालिदास ने शुंग राजाओं के छोड़कर अपनी रचनाओं में अपने आश्रयदाता या किसी साम्राज्य का उल्लेख नहीं किया। सच्चाई तो यह है कि उन्होंने पुरुरवा और उर्वशी पर आधारित अपने नाटक का नाम विक्रमोर्वशीयम् रखा। कालिदास ने किसी गुप्त शासक का उल्लेख नहीं किया। विक्रमादित्य नाम के कई शासक हुए, संभव है कि कालिदास इनमें से किसी एक के दरबार में कवि रहे हों। अधिकांश विद्वानों का मानना है कि कालिदास शुंग वंश के शासनकाल में थे, जिनका शासनकाल 100 सदी ईसापूर्व था।

- अग्निमित्र, जो मालविकाग्निमित्र नाटक का नायक है, कोई सुविख्यता राजा नहीं था, इसीलिए कालिदास ने उसे विशिष्टता प्रदान नहीं की। उनका काल ईसा से दो शताब्दी पूर्व का है और विदिशा उसकी राजधानी थी। कालिदास के द्वारा इस कथा के चुनाव और मेघदूत में एक प्रसिद्ध राजा की राजधानी के रूप में उसके उल्लेख से यह निष्कर्ष निकलता है कि कालिदास अग्निमित्र के समकालीन थे।

- यह स्पष्ट है कि कालिदास का उत्कर्ष अग्निमित्र के बाद (150 ई° पू°) और 634 ई° पूर्व तक रहा है, जो कि प्रसिद्ध ऐहोल के शिलालेख की तिथि है, जिसमें कालिदास का महान कवि के रूप में उल्लेख है। यदि इस मान्यता को स्वीकार कर लिया जाए कि माण्डा की कविताओं या 473 ई° के शिलालेख में कालिदास के लेखन की जानकारी का उल्लेख है, तो उनका काल चौथी शताब्दी के अन्त के बाद का नहीं हो सकता।

- अश्वघोष के बुद्धचरित और कालिदास की कृतियों में समानताएं हैं। यदि अश्वघोष कालिदास के ऋणी हैं तो कालिदास का काल प्रथम शताब्दी ई° से पूर्व का है और यदि कालिदास अश्वघोष के ऋणी हैं तो कालिदास का काल ईसा की प्रथम शताब्दी के बाद ठहरेगा।

- हम कोई भी तिथि स्वीकार करें, वह हमारा उचित अनुमान भर है और इससे अधिक कुछ नहीं।

- कथाओं और किंवदंतियों के अनुसार कालिदास शारीरिक रूप से बहुत सुंदर थे और विक्रमादित्य के दरबार के नवरत्नों में एक थे। कहा जाता है कि प्रारंभिक जीवन में कालिदास अनपढ़ और मूर्ख थे।
- कालिदास का विवाह विद्योत्तमा नाम की राजकुमारी से हुआ। ऐसा कहा जाता है कि विद्योत्तमा ने प्रतिज्ञा की थी कि जो कोई उसे शास्त्रार्थ में हरा देगा, वह उसी के साथ विवाह करेगी। जब विद्योत्तमा ने शास्त्रार्थ में सभी विद्वानों को हरा दिया तो हार को अपमान समझकर कुछ विद्वानों ने बदला लेने के लिए विद्योत्तमा का विवाह महामूर्ख व्यक्ति के साथ कराने का निश्चय किया। चलते चलते उन्हें एक वृक्ष दिखाई दिया जहां पर एक व्यक्ति जिस डाल पर बैठा था, उसी को काट रहा था। उन्होंने सोचा कि इससे बड़ा मूर्ख तो कोई मिलेगा ही नहीं। उन्होंने उसे राजकुमारी से विवाह का प्रलोभन देकर नीचे उतारा और कहा- "मौन धारण कर लो और जो हम कहेंगे बस वही करना"। उन लोगों ने स्वांग भेष बना कर विद्योत्तमा के सामने प्रस्तुत किया कि हमारे गुरु आप से शास्त्रार्थ करने के लिए आए है, परंतु अभी मौनव्रती हैं, इसलिए ये हाथों के संकेत से उत्तर देंगे। इनके संकेतों को समझ कर हम वाणी में आपको उसका उत्तर देंगे। शास्त्रार्थ प्रारंभ हुआ। विद्योत्तमा मौन शब्दावली में गूढ़ प्रश्न पूछती थी, जिसे कालिदास अपनी बुद्धि से मौन संकेतों से ही जवाब दे देते थे। प्रथम प्रश्न के रूप में विद्योत्तमा ने संकेत से एक उंगली दिखाई कि ब्रह्म एक है। परन्तु कालिदास ने समझा कि ये राजकुमारी मेरी एक आंख फोड़ना चाहती है। क्रोध में उन्होंने दो अंगुलियों का

संकेत इस भाव से किया कि तू मेरी एक आंख फोड़ेगी तो मैं तेरी दोनों आंखें फोड़ दूंगा। लेकिन कपटियों ने उनके संकेत को कुछ इस तरह समझाया कि आप कह रही हैं कि ब्रह्म एक है लेकिन हमारे गुरु कहना चाह रहे हैं कि उस एक ब्रह्म को सिद्ध करने के लिए दूसरे (जगत्) की सहायता लेनी होती है। अकेला ब्रह्म स्वयं को सिद्ध नहीं कर सकता। राज कुमारी ने दूसरे प्रश्न के रूप में खुला हाथ दिखाया कि तत्व पांच है। तो कालिदास को लगा कि यह थप्पड़ मारने की धमकी दे रही है। उसके जवाब में कालिदास ने घूंसा दिखाया कि तू यदि मुझे गाल पर थप्पड़ मारेगी, मैं घूंसा मार कर तेरा चेहरा बिगाड़ दूंगा। कपटियों ने समझाया कि गुरु कहना चाह रहे हैं कि भले ही आप कह रही हो कि पांच तत्व अलग-अलग हैं पृथ्वी, जल, आकाश, वायु एवं अग्नि। परंतु यह तत्व प्रथक्-प्रथक् रूप में कोई विशिष्ट कार्य संपन्न नहीं कर सकते अपितु आपस में मिलकर एक होकर उत्तम मनुष्य शरीर का रूप ले लेते है जो कि ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ कृति है। इस प्रकार प्रश्नोत्तर से अंत में विद्योत्तमा अपनी हार स्वीकार कर लेती है। फिर शर्त के अनुसार कालिदास और विद्योत्तमा का विवाह होता है। विवाह के पश्चात कालिदास विद्योत्तमा को लेकर अपनी कुटिया में आ जाते हैं और प्रथम रात्रि को ही जब दोनों एक साथ होते हैं तो उसी समय ऊंट का स्वर सुनाई देता है। विद्योत्तमा संस्कृत में पूछती है "किमेतत्" परंतु कालिदास संस्कृत जानते नहीं थे, इसीलिए उनके मुंह से निकल गया "ऊट्र"। उस समय विद्योत्तमा को पता चल जाता है कि कालिदास अनपढ़ हैं। उसने कालिदास को धिक्कारा और यह कह कर घर से निकाल दिया कि सच्चे विद्वान् बने बिना घर वापिस नहीं आना।

कालिदास ने सच्चे मन से काली देवी की आराधना की और उनके आशीर्वाद से वे ज्ञानी और धनवान बन गए। ज्ञान प्राप्ति के बाद जब वे घर लौटे तो उन्होंने दरवाजा खटखटा कर कहा - *कपाटम् उद्घाट्य सुन्दरि!* (दरवाजा खोलो, सुन्दरी)। विद्योत्तमा ने चकित होकर कहा -- *अस्ति कश्चिद् वाग्विशेषः* (कोई विद्वान लगता है)।

- इस प्रकार, इस किम्वदन्ती के अनुसार, कालिदास ने विद्योत्तमा को अपना पथप्रदर्शक गुरु माना और उसके इस वाक्य को उन्होंने अपने काव्यों में भी जगह दी। कुमारसंभवम् का प्रारंभ होता है- *अस्त्युत्तरस्याम् दिशि...* से, मेघदूतम् का पहला शब्द है- *कश्चित्कांता...* और रघुवंशम् की शुरुआत होती है- *वागार्थविव...* से।
- छोटी-बड़ी कुल लगभग चालीस रचनाएँ हैं जिन्हें अलग-अलग विद्वानों ने कालिदास द्वारा रचित सिद्ध करने का प्रयास किया है।[12] इनमें से मात्र सात ही ऐसी हैं जो निर्विवाद रूप से कालिदासकृत मानि जाती हैं: तीन नाटक(रूपक): अभिज्ञान शाकुन्तलम्, विक्रमोर्वशीयम् और मालविकाग्निमित्रम्; दो महाकाव्य: रघुवंशम् और कुमारसंभवम्; और दो खण्डकाव्य: मेघदूतम् और ऋतुसंहार। इनमें भी ऋतुसंहार को प्रो॰ कीथ संदेह के साथ कालिदास की रचना स्वीकार करते हैं।[13]
- **मालविकाग्निमित्रम्** कालिदास की पहली रचना है, जिसमें राजा अग्निमित्र की कहानी है। अग्निमित्र एक निर्वासित नौकर की बेटी मालविका के चित्र से प्रेम

करने लगता है। जब अग्निमित्र की पत्नी को इस बात का पता चलता है तो वह मालविका को जेल में डलवा देती है। मगर संयोग से मालविका राजकुमारी साबित होती है और उसके प्रेम-संबंध को स्वीकार कर लिया जाता है।

- **अभिज्ञान शाकुन्तलम्** कालिदास की दूसरी रचना है जो उनकी जगतप्रसिद्धि का कारण बना। इस नाटक का अनुवाद अंग्रेजी और जर्मन के अलावा दुनिया के अनेक भाषाओं में हुआ है। इसमें राजा दुष्यंत की कहानी है जो वन में एक परित्यक्त ऋषि पुत्री शकुन्तला (विश्वामित्र और मेनका की बेटी) से प्रेम करने लगता है। दोनों जंगल में गंधर्व विवाह कर लेते हैं। राजा दुष्यंत अपनी राजधानी लौट आते हैं। इसी बीच ऋषि दुर्वासा शकुंतला को शाप दे देते हैं कि जिसके वियोग में उसने ऋषि का अपमान किया वही उसे भूल जाएगा। काफी क्षमाप्रार्थना के बाद ऋषि ने शाप को थोड़ा नरम करते हुए कहा कि राजा की अंगूठी उन्हें दिखाते ही सब कुछ याद आ जाएगा। लेकिन राजधानी जाते हुए रास्ते में वह अंगूठी खो जाती है। स्थिति तब और गंभीर हो गई जब शकुंतला को पता चला कि वह गर्भवती है। शकुंतला लाख गिड़गिड़ाई लेकिन राजा ने उसे पहचानने से इनकार कर दिया। जब एक मछुआरे ने वह अंगूठी दिखायी तो राजा को सब कुछ याद आया और राजा ने शकुंतला को अपना लिया। शकुंतला शृंगार रस से भरे सुंदर काव्यों का एक अनुपम नाटक है। कहा जाता है *काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला* (कविता के अनेक रूपों में अगर सबसे सुन्दर नाटक है तो नाटकों में सबसे अनुपम शकुन्तला है।)

- **विक्रमोर्वशीयम्** एक रहस्यों भरा नाटक है। इसमें पुरूरवा इंद्रलोक की अप्सरा उर्वशी से प्रेम करने लगते हैं। पुरूरवा के प्रेम को देखकर उर्वशी भी उनसे प्रेम करने लगती है। इंद्र की सभा में जब उर्वशी नृत्य करने जाती है तो पुरूरवा से प्रेम के कारण वह वहां अच्छा प्रदर्शन नहीं कर पाती है। इससे इंद्र गुस्से में उसे शापित कर धरती पर भेज देते हैं। हालांकि, उसका प्रेमी अगर उससे होने वाले पुत्र को देख ले तो वह फिर स्वर्ग लौट सकेगी। विक्रमोर्वशीयम् काव्यगत सौंदर्य और शिल्प से भरपूर है।

कुमारसंभवम् उनके महाकाव्यों के नाम है। रघुवंशम् में सम्पूर्ण रघुवंश के राजाओं की गाथाएँ हैं, तो कुमारसंभवम् में शिव-पार्वती की प्रेमकथा और कार्तिकेय के जन्म की कहानी है।

रघुवंशम् में कालिदास ने रघुकुल के राजाओं का वर्णन किया है।

मेघदूतम् एक गीतिकाव्य है जिसमें यक्ष द्वारा मेघ से सन्देश ले जाने की प्रार्थना और उसे दूत बना कर अपनी प्रिय के पास भेजने का वर्णन है। मेघदूत के दो भाग हैं - पूर्वमेघ एवं उत्तरमेघ।

ऋतुसंहारम् में सभी ऋतुओं में प्रकृति के विभिन्न रूपों का विस्तार से वर्णन किया गया है।

मेघदूतं खण्डकाव्यमस्ति, यस्य रचयिता महाकविः कालिदासः। काव्यमिदं पूर्वमेघदूतम्, उत्तरमेघदूतम् इति खण्डद्वये विभक्तमस्ति । काव्येस्मिन् १काचित् विरह-गुरुणा पीडितस्यैकस्य यक्षस्य कथाऽस्ति । अस्य रचयितुः कालिदासस्य परिचयादिकं प्रकरणान्तरे उक्तम् ।

कालिदासेन मेघदूते विरहिणो लोकस्य मनः स्थितेर्वर्णना कृता, पूर्वमेघे आदितोऽवसानपर्यन्तं बाह्यप्रकृतिश्चित्रिता, एवमेव उत्तरमेघे अन्तः प्रकृतिः । सन्देशप्रेषणस्य प्रवृत्तिस्तदाधारेण काव्यप्रणयने प्रवृत्तिश्चेयं पुराणेषु रामायणे महाभारते चापि प्राप्यते । नलचरिते हंसेन संवादप्रेषणे उपकृतम्, युधिष्ठिरेण कृष्णद्वारा संवादः प्रेषितः,रामेण हनूमता संवादः प्रापितः । तदत्र कालिदासेन रामायणमनुसृत्य मेघदूतं प्रणीतमिति कथनं नासत्यम् । कालिदासः स्वयमपि तथ्यमिदं गोपयितुं नैच्छत् ।यद्यसौ तत्थमिदं गोपयितुमैषिष्यत्, तदा स्वकाव्ये- 'इत्याख्याते पवनतनयं मैथिलीवोन्मुखी सा' इति पद्यं कथमपि नायोजयिष्यत् ।

रामायणाधारेण कृतमपीदं खण्डकाव्यं स्वीयां मौलिकतां न जहाति । मौलिकता हि कथायाः प्रकारस्य वाऽनुकरणमात्रेण् नापहीयते, सा हि पद्यानां निर्माणे कथया उपस्थापने नवीनां पध्दतिमपेक्षते । माघेनापि पुराणेतिहासप्रथितं वृत्तमादायैव शिशुपालवधं प्रणीतमथापि तस्य मौलिकत्वमक्षतमेव, तथैव मेघदूतस्यापि मौलिकता शैल्या नवीनतायां मनोभावानां चित्रणे नूतनतायां च निहिता । कालिदासेन मेघो दूततां गमितस्तद्विषये भामहेनापत्तिः कृता –

अयुक्तिमद्यथा दूता जलभृन्मारुतेन्दवः । तथा भ्रमरहारीतचक्रवाकशुकादयः ॥

अवाचोऽयुक्तवाचश्च दूरदेशविचारिणः । कथं दूत्यं प्रपद्येरन्निति युक्त्या न युज्यते ॥

अत्र प्रसङ्गे उत्तरमपि स्वयमेव तेन दत्तम् –

यदि चोत्कण्ठया यत्तदुन्मत्तं इव भाषते ।

तथा भवतु भूम्नेदं सुमेघोभिः प्रयुज्यते ॥

कालिदासेनापि – 'कामार्त्ता हि प्रकृतिकृपणाश्चेतनाचेतनेषु' इति कथयित्वा सकलाप्येतद्विषयाऽऽपत्तिः परिहृता ।

यक्षः कुबेरस्य सेवकः आसीत् । सः स्वकार्येषु प्रमत्तः अभवत् । कुबेरस्य शापेन सः एकवर्षपर्यन्तं रामगिरिपर्वते न्यवसत् । तत्र अबला विप्रयुक्त: स कामी यत्र यत्र पश्यति तत्र तत्र कामोद्दीपकवस्तूनि सम्पश्यानः अस्वस्थ: सन् अस्तं गमितमहिमा भूत्वा कृश; भूत्वा कनकवलयभ्रश्प्रकोष्ठ् भूत्वा रामगिरे: (नवीनं रामगढ) विजनगुहासु वासम् चक्रे। एवम् विरहकातर: स: सानुम् आश्लिष्यमाणम् मदेन् वप्रकीडाम् कुर्वाणम् गजसदृशम् च प्रेक्ष्यमाणम् मेघम् पश्यति।न् यद्यपि मेघ: धूमज्योतिसलिलमरुत्भि निर्मित; अचेतन: स कामातुर: न्यायान्यायचिन्तने असमर्थ्; सन् स्वप्रेयसीं प्रति मेघद्वारा संदेशं प्रेषयति ।

गम्यमाने सति मेघेन क: क: मार्गा: स्वीकरणीया: , के नगरा: ग्रामा: च मार्गे सन्ति के के दृश्या: द्रष्टव्या: कथम् तेषाम् अवगति: इत्यादय: पूर्वमेघस्य विषया: । रामगिरे: आरभ्य उत्तराभिमुखे गते अमरकूटपर्वतम्नर्मदा नदीविदिशा नगरीवेत्रवती

नदीमाल्वस्य राजधानी, कुरुक्षेत्रम् इत्यादयः द्रष्टव्याः काशि हिन्दूविश्वविद्यालयस्य नेपाळि विभागीयेन श्रीमत् शेषराज शर्मणा 'चन्द्रकला' व्याख्यया प्रसिद्धीकृतमस्ति ।

कश्चित् कान्ता विरहगुरुणा स्वाधिकारात् प्रमत्तः

शापेनास्तङ्गमितमहिमा वर्षभोग्येण भर्तुः।

यक्षश्चक्रे जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु

स्निग्धच्छायातरुषु वसतिं रामगिर्याश्रमेषु।।

पूर्वमेघः**[सम्पादयतु]**

एकदा यक्षाणां स्वामी कुबेरः कस्मैश्चित् यक्षाय कार्यदायित्वम् अयच्छत्, परन्तु सः यक्षः तस्मिन् कार्ये प्रमादम् अकरोत्। अतः कुबेरः तम् अशप्यत्। एकवर्षं यावत् सः स्वप्रियायाः वियुक्तो भवेत् इति शापः आसीत्। शापकारणात् तस्य यक्षत्वं व्यगंतं, सश्च मानवरूपेण मृत्युलोकं प्राप्तः। रामगिरि-नामकस्य पर्वतस्य आश्रमेषु तस्य निवासस्थानम् आसीत्। तस्य आश्रमस्य जले सीतया स्नानं कृतम् आसीत्, अतः तत् पवित्रं जातम् आसीत्। आश्रमस्थ वृक्षाः अपि छायान्तः आसन्।

महाकविकालिदासेन शापितयक्षस्य यस्याः कथायाः आधारेण मेघदूतस्य रचना कृता अस्ति, तस्याः कथायाः उल्लेखः पद्मपुराणे, 'चारित्रवर्धिनी'-नामिकायां मेघदूत-टीकायां च प्राप्यते। पद्मपुराणे योगिन्यैकादश्याः माहत्म्यावसरे कृष्णः एतस्याः कथायाः उल्लेखं करोति।[१]

प्रियाविरहेण व्यथितः यक्षः अष्टौ मासान् यावत् रामगिरौ यापितवान्। विरहदौर्बल्येन तस्य शरीरं कृषम् अभवत्। हस्ते यत् कङ्कणम् आसीत्, तदपि कृषात् हस्तात् पतितम्। कामुकः यक्षः पर्वतशीर्षे स्थित्वा समयं यापयति स्म। एवम् आषाढमासः समारब्धः। अतः आषाढस्य प्रथमे दिवसे तेन आकाशे उत्खातकेलिं [२] कुर्वन् हस्तिरूपी प्रक्षणीयः पर्वतालिङ्गनसदृशः मेघः दृष्टः। सः कुबेरस्य भृत्यः स्वाश्रूणि अवरुध्य अभिलाषायाः जनकस्य मेघस्य सम्मुखं पश्यन् कथमपि आत्मानं वशीकृत्य दीर्घकालं यावत् किमपि चिन्तनं करोति। मेघस्य दर्शनेन सुखसमन्विताः अर्थात् ये प्रियायाः समीपे सन्ति, तेषामपि चित्तम् उत्कण्ठितं भवति, तर्हि प्रियायाः सङ्गमाय लालायितस्य विरहयुक्तस्य पुरुषस्य विषये तु किं विक्तव्यम्? एवम् उत्कण्ठितः सः यक्षः मेघं दृष्ट्वा श्रावणमासस्य प्रत्यासन्नताम् अजानत्। श्रावणीयवर्षाकाले मम पत्न्याः उत्कण्ठा चरमे स्यात् इति विचिन्त्यमानः पत्नीप्राणरक्षणेच्छोः तस्य मनसि स्वकुशलक्षेमस्य सन्देशं प्रेषयितुं विचारः समुद्भूतः। तेन विचारेण एव सः प्रसन्नः अभवत्। ततः सः कुटजपुष्पैः (गिरिमल्लिका), प्रेमाधिक्यवचनैः च सह तस्य मेघस्य स्वागतम् आचरत।

धूमतेजोजलवायुभिः निर्मितः जडः मेघः कुत्र? कार्यसम्पादनशक्तेन्द्रियैः जीवैः प्रापयितव्याः सन्देशाविषयाः कुत्र? अर्थात् उभयोः मध्ये कुत्रापि सम्बन्ध एव नास्ति। जडः मेघः सन्देशवहने सर्वथा असमर्थः इति उत्कण्ठावशात् अविचारयन् यक्षः तं सन्देशनयनार्थं याचितवान्। यतः

कामपीडिताः पुरुषाः चेतनाचेतनयोः भेदं कर्तुम् अपि असर्थाः भवन्ति। मेघे सन्देशवहनयोग्यतां प्रकटीकृत्य यक्षः तं वदयति यत्, लोकप्रसिद्धयोः पुष्कर-आवर्तकयोः कुले समुत्पन्नं, स्वेच्छया शरीरधारिणं, इन्द्रस्य प्रधानपुरुषं त्वाम् अहं जाने। गुणयुक्तेभ्यः याच्ञा निष्फला अपि वरा, परन्तु अधमेभ्यः पूर्णा याच्ञा अपि अधमा। अतः दैवयोगेन प्रियजनवियुक्तः अहं तुभ्यं याचनां करोमि इति।

हे जलद! त्वं सूर्य-कामयोः तापात् पीडितानाम् आश्रयः असि। अतः कुबेरस्य कोपात् प्रियावियोजितस्य मम सन्देशं प्रियायाः समीपं नय। बाह्योद्याने विद्यमानस्य शिवस्य मूर्ध्नि स्थितया चन्द्रिकया प्रक्षालितैः भवनैः युक्ता यक्षपुरी अलका त्वया गन्तव्या। पथिकानां प्रियाः (प्रियागमनस्य) विश्वासेन सधैर्यं केशाग्रभागम् उपरि कृत्वा उत्कण्ठापूर्वकम् आकाशे आरूढन्तं त्वां विलोकयिष्यन्ति। तव आकाशव्याप्तौ सत्यां मत्सदृशं परवशजनं विहाय कः अन्यः विरहव्यथितां पत्नीम् उपेक्षेत? अवरोधरहितगतियुक्त! दिनगणनायां रतां पतिव्रतां स्वस्य भ्रातृजायां त्वं जीवतम् अवश्यं द्रक्ष्यसि। यतः प्रियागमनस्य आशायाः बन्धनं सन्दरीणां पुष्पतुल्य-वियोगे तत्कालं नश्यमानं प्रेमि हृदयं प्रायशः नाशात् निवारयति। मन्दं मन्दं तवानुकूलः वायुः त्वां नुदति। अपि च ते वामपार्श्वस्थितः निकटवर्ती गर्वान्वितः चातकः श्रोत्रप्रियं गायति। सम्भोगकालज्ञानाः बद्धपङ्क्तयः बलाकाः (प्रियाः) लोचनाकर्षकं त्वां नभसि आश्रयिष्यन्ते। यत् उद्गतकन्दगलिकां धरां फलवतीं कर्तुं

शक्नोति, तत् श्रोत्रमधुरं तव गर्जनं श्रुत्वा मानसरोवरं गन्तुम् उत्सुकाः राजहंसाः गगने कैलासं यावत् तव सहचराः भविष्यन्ति। जनानां पूज्यै रामचरणन्यासैः मेखलायां चिह्नितं स्निग्धमित्रम् एनम् उच्चं गिरिं समालिङ्ग्य गच्छ। प्रतिवर्षायां तव संयोगं प्राप्य दीर्घकालवियोगसमुद्भूतम् उष्णं नेत्रजलम् उत उष्माणं त्यजतः पर्वतस्य प्रेमाभिव्यक्तिः वर्तते।

इतः परं यक्षः सौन्दर्यपूर्वकं गमनमार्गं कथयति। 'किं वायुः पर्वतशिखरं नीत्वा गच्छति' इति साश्चर्यम् उपरि दृश्यमानानां सिद्धपुरुषप्रियाणां दृश्यः त्वं मार्गे दिग्गजानां हस्ताक्रमाणस्य परित्यागं कुर्वन् इदं वेतयुक्तस्थलं त्यक्त्वा उत्तराभिमुखी सन् गच्छ। मणिकान्तीनां मिश्रणसदृशं धनुष्खण्डं वल्मीकाग्रभागात् निर्गच्छति, येन उज्ज्वलकान्तियुक्तस्य पिच्छेन गोपवेशधारिणः कृष्णस्य समानं तव श्यामशरीरम् अत्यधिकशोभां प्राप्यस्यति। सस्यं त्वयि अधीनम् अस्ति। अतः प्राकृतिप्रमाद्रैः, भ्रूविकार-अपरिचितैः, जनपदवधूलोचनैः सादरं वीक्ष्यमाणः त्वं 'माल'-प्रदेशं तत्कालमेव हलोत्कर्षणसुरभिः यथा स्यात्, तथा वर्षाः कृत्वा किञ्चित् पश्चिमदिशं प्रति गत्वा पुनः उत्तरमार्गेणैव गच्छ। आम्रकूटः पर्वतः धारासम्पातवर्षाभिः वनोत्पातस्य शान्तकर्तारं, मार्गक्लान्तिविमुक्तं च त्वां निश्चयेन स्वशिरसि धारणं करिष्यति। क्षुद्रजनः अपि आश्रयाय सम्प्राप्तस्य मित्रस्य आगमने सति पूर्वकृतोपकारस्य विचारं कृत्वा विमुखः न भवति, तर्हि उन्नतः सः आम्रकूटः कथं विमुखः भवेत्? परिपक्वफलैः शोभितस्य,

वन्याम्रवृक्षैः आच्छादितमार्गयुक्तस्य च पर्वतस्य शिखरे आरूढे सति पीतपृथ्व्याः स्तनसमाने मध्ये कृष्णवर्णीयः विस्तृतभागे देवदम्पतीभ्यां दर्शनीयाम् अवस्थायां त्वं प्राप्स्यसि।

किरातादिनां वनवासिनां ललनाद्वारा उभभोगकृते कुञ्जे आम्रकूटपर्वते किञ्चित् विश्रम्य, वर्षाः कृत्वा च त्वम् अधिकं वेगेन अग्रे गन्तुं प्रभविष्यसि। ततः अग्रिमे मार्गे त्वं विन्ध्याचलस्य तलक्षेत्रे विशीर्णां नर्मदानदीं गजशरीरे रेखावत् चित्रितां द्रक्ष्यसि। कृतवृष्टिः त्वं वन्यगजानां मदैः कटुः उत सुगन्धितं, जम्बूकस्य वृक्षाणां कुञ्डैः अवरुद्धवेगयुक्तं नर्मदाजलं नीत्वा अग्रे गच्छेः। जलरूपे सारे सति वायुः त्वां कम्पयितुं न शक्ष्यति। यतः सर्वेऽपि सारगुणहिनाः पदार्थाः अगुरवः भवन्ति, समग्रत्वञ्च गुरुत्वात् अकम्पनयोग्यं भवति।

ग्रंथस्योपलब्धि: नास्ति।

एतदतिरिक्तमन्यानां शाखानां वर्णनं विश्वेश्वरानन्दवैदिकशोधसंस्थानत: प्रकाशिते ग्रंथे वैदिकवाङ्.मस्येतिहासे प्राप्यते।

नैगेया शाखाया: परिचय:-

अस्या: शाखाया: नाम चरणव्यूहसूत्रेषु कौथुमशाखाया अवान्तरभेदेषूल्लिखितमस्ति। तत्र कौथुमानां सप्तभेदा: भवन्ति-आसुरायणा:, वातायना:, प्रांजलिद्र्वैनभृता:, कौथुमा:, प्राचीनयोग्या नैगेयाश्च। नैगेयशाखानुक्रमण्यां सिद्धयति अस्या: शाखाया: संहिता आसीत्। आर्षं दैवतमितिभागद्वयमस्त्यस्या: शाखाया: नाम। साममन्त्राणां ऋषीणां सूची आर्षम् देवतानामनुक्रमण्यां विद्यते। मन्त्राणां क्रमे कौथुमनैगेययोश्शाखयो: भेद: नास्ति। केवलं नैगेयां "आक्रन्दय" इति मंत्र अधिकोऽस्ति। अयं मन्त्र अन्येषां सामसंहितायां न प्रदत्तमस्ति।

अपरमपि वैशिष्ट्यं दृश्यते कौथुमशाखायाम् अरण्यकाण्डं सप्तमं प्रपाठकम् इति नोक्त्वा षष्ठाध्यायस्य संज्ञा प्रदत्ता। नैगेयशाखायां तम् अध्यायं सप्तमं प्रपाठकं मन्यते। अस्यान्तिमे पंचमे खंडे चतुर्दशस्थानोपरि पंचदशऋच: पठ्यन्ते। महानाम्न्या: प्रथमऋच: "विदा मघवन्" इतिमन्त्रं अरण्यकाण्डे अथवा सप्तमस्य प्रपाठकस्य अन्तिमायां ऋचि पठ्यते।

शार्दूलशाखाया: परिचय: -

हेमाद्रौ श्राद्धकल्पपरिभाषा प्रकरणे लिख्यते - तद्यथा शार्दूलशाखिनां स पूर्वी महानामति मधुश्रुन्निधनम्। आचार्या: वीरमित्रमहोदया: श्राद्धप्रकाशस्य (130) त्रिंशदुत्तरशततमे पृष्ठे शार्दूलशाखाम् उद्धृतं कुर्वन्ति येन ज्ञायते इयं शाखा आसीत्।

वार्षगण्या शाखा -

चरणव्यूहसूत्रे अस्या: शाखाया: वर्णनमस्ति। पिंगलछन्दसूत्रस्य व्याख्यायां यादवप्रकाश: नागी गायत्र्या: उदाहरणं वार्षगण्यसंहितात: ददाति - ययोरिदं विश्वमेजति ता विद्वांसो हवामहे वाम्। वीतं सौम्यं मधु।। इति वार्षगण्यानाम्। इदमेवोदाहरणं निदानसूत्रेऽपि उद्धृतमस्ति।

गौतमीया शाखा-

गौतमस्य धर्मसूत्रं पितृमेधसूत्रं च वर्तमाने प्राप्येते। संहिताया: विषये किंचिदपि न वदन्ति कुंदनलालशर्ममहोदया:।

अनेन प्रकारेण अन्या शाखा: यथा-भाल्लविनशाखा, कालबविनशाखा, शाट्यायिन शाखा, रुरुकिणशाखा, कापेयाशाखा, माषशराव्याशाखा, ताण्ड्यशाखेत्यादीनां शाखानां

Scanned with CamScanner

सामविधान ब्राह्मणस्य प्रतिपाद्य विषया

सामविधानं ब्राह्मणं त्रिप्र पाठकैः पंचविंशति-अनुवाकैश्च विभक्तः वर्तते। तेषां विवरणं यथा-

प्रथमपाठकः- अस्य प्रपाठकस्य प्रथमानुवाके प्रजापत्युत्पत्तिः, भौतिकजगत् सृष्टिः, सामप्रंशसानां वर्णनं विद्यते। द्वितीयानुवाके कृच्छ्र तथा अति कृच्छ्रव्रतानां स्वरुपं फलंच वर्णितं विद्यते। तृतीयानुवाके स्वाध्यायः, अग्न्याधाननियमाः, दर्शपूर्णमासादीनां प्रयोगाः प्रतिपादिताः सन्ति। चतुर्थानुवाके श्रौतयागानां प्रतिपादनेन सह रूद्रादिदेवप्रीतिकर सा-मगानानम् उल्लेखः विद्यते। उंचयानुवाकतः अष्टमानुवाकं यावत् अवाच्यवाच्य-चैर्यादीनां प्रायाश्चितं वर्णितं विद्यते।

द्वितीयप्रपाठकः तृतीय प्रपाठकश्च काम्यरोगादिजन्यभयशमनादि प्रयोगान् निरूपयति। चतुर्थप्रपाठकात् अष्टमान्त् अभीष्टसिद्ध्यादिविषये निरुपयति। नवमप्रपाठके सामसम्प्रदाय-प्रवर्तकाचार्यणाम् अनुक्रमः, अध्ययनाधिकारिणः, प्रभृतिविषयाणां निरुपणं करोति। अस्य ब्राह्मणस्योपरि सायणाचार्यस्य भरतस्वामिनश्च भाष्ये वर्तते।

आर्षेय ब्राह्मणम्

आर्षेयब्राह्मणं सामवेदीय-ऋषीणां विषये प्रतिपादयति। यथा ब्राह्मारम्भे एवोक्तं वर्तते-

'अथ खलवयमार्षप्रदेशो भवति' (आर्षेयब्राह्मणम् 1-1-1) इति

अत्र ब्राह्मणे सामगानानामुल्लेखः प्रसिद्ध नामान्तरैः सह प्रदत्तः वर्तते। प्रायः सायगानानि तानि तेषां ऋषीणां नाम्रा प्रसिद्धिङ्.गतानि यैः तत्तत्सामगानानां योजना कृता। एवम् अर्थकरणे कृते सत्येव आर्षेय ब्राह्मणम् इति नाम सार्थकं भवति। यतो हि अत्र ब्राह्मणे सामगान-ऋषीणां तथा तेषां ऋषिगायकानां विषये साक्षात्प्रतिपादनं सूची वा नोपलभ्यते।

सामगानानां चत्वारः प्रकाराः सन्ति। तेषु आर्षेयब्राह्मणम् ग्रामगेयसामगानेग्र अरण्यग-

Scanned with CamScanner

तत्रादौ वेदाः समष्ट्यात्मकेन मन्त्रराशयः अध्ययनाध्यापनरूपेण प्रचलिताः आसन्। तेन समष्ट्यात्मकमन्त्रराशिभ्य एव प्राचीनाचार्यमहर्षिभिः समस्ता श्रौतस्मार्तयज्ञाः सर्वे सम्पादिता अभूवन्। गच्छताकालने ऋषीणां वेदविदां सामान्यजनानांच मेधाशक्तेः ह्रासादिकं भूत्तभवद्भविष्यज्ञानदृष्ट्या तत्वतो ज्ञात्वा भगवान् वेदव्यासः श्रौतस्मार्तयज्ञा-नुष्ठानान् व्यवस्थितक्रमेण सम्पादनाय समग्रं वेदं चतुर्धा व्यभजत्। त एव ऋग्वेदः, यजुर्वेदः, सामवेदः, एवम् अथर्ववेद इति नाम्ना प्रसिद्धिं प्राप्नुवन्। सैव चातुर्होत्रपरंपरा इति कथ्यते। तत्र ऋग्वेदे समस्तदेवतानां स्तुतिपरका मंत्रा अत्र संवलिता भवन्ति। श्रौ-तयज्ञेषु होता नामको ऋत्विक् अस्य ऋग्वेदस्य अधीतवेदः सम्यक् ज्ञाता च भवति। तत्र श्रौतयज्ञेषु ब्रह्मणा ऋत्विजा देवताव्हानाय स्तुतये अनुज्ञां प्राप्य सम्बद्धदेवतामन्त्रस्तोमान् होता उच्चारयेत्। होता नाम देवतान् मन्त्रोच्चारणेन आह्वाता इत्यर्थः। एवं यजुर्वेदाध्येता अधीतयजुर्वेदः यज्ञेषु अध्वर्यु संज्ञकं पदमलंकरोति। यज्ञेषु ब्रह्मणा अनुज्ञां प्राप्य अध्वर्युः आहूतदेवतानुद्दिश्य हविषामाहुतिं कुंडे प्रददाति। अध्वरस्य यज्ञस्य संपूर्णतया धुरं दधातीति अध्वर्युः। भगवता यास्केन निरुक्तग्रंथे अध्वर्युपदनिर्वचनमेवं युक्तं यत्, "अध्वर्यु-रध्वरयुरध्वरं युनक्त्यध्वरस्यनेता अध्वरं कामयत इति वा, अपि वाधीयानेयुरपबन्धो अध्वर इति यज्ञ नाम ध्वरतिर्हिंसाकर्मा तत्प्रतिषेधः" इति। श्रौतयज्ञेषु पूर्वोक्तवद्ब्रह्मणा

Scanned with CamScanner

अध्याय:४

महाकाव्यम् इतिहासश्च

४.० प्रस्तावना

एतत् अध्याय उत्तर अध्यायिन् विद्यार्थिन् समर्थ

महाकाव्येन परिकल्पना

महाकाव्यस्य विकास

महाकाव्यलक्षणानि

४.१ प्रस्तावना

महाकाव्यम् इति किञ्चन काव्यस्य लक्षणम्। किं काव्यं महाकाव्यम् उच्यते इत्यस्य परिमाणाय एतस्य लक्षणस्य उपयोगो भवति। साहित्यदर्पणादयेषु अनेकेषु ग्रन्थेषु महाकाव्यस्य लक्षणानि वर्णितानि सन्ति।

परिकल्पना

महाकाव्येन अष्टाधिकसर्गेषु विभक्तेन भाव्यम् । अत्र हि एको नायकः सुरो वा क्षत्रियः, बहवो वा सद्वंशक्षत्रियाः भूपा नायकाः । नायकेन हि धीरोदात्तप्रकृतिकेन भाव्यम्, शृङ्गारवीरशान्तानामेकोऽङ्गी रसः, अन्ये रसा अंगान्येव, सर्वेऽपि नाटकसन्धयः, वृत्तं त्वैतिहासिकं वा तदितरदापि सज्जनाश्रयं, चतुर्णामेव वर्गाणां साधनं फलं तु तेष्वेक, आशीर्नमस्क्रियां वस्तुनिर्देशो वा प्रारम्भवाक्यं, सतां गुणसंकीर्तनं खलानां निन्दा च, प्रतिसर्गं हि भाविसर्गकथासंसूचकमवसानं, यथायोगं सन्ध्या-सूर्य-इन्दु-रजनी-प्रदोष-ध्वान्त-वासर-प्रातर्मध्याह्नमृगयाशैलः तु वन-सागर-सम्भोग-विप्रलम्भ-मुनि-स्वर्ग-पुराध्वररणप्रयाणोपयममन्त्रपुत्रोदयादयः साङ्गोपाङ्गं वर्णनीयाः । अस्य नाम वृत्तस्य कवेर्नायकस्य वा नाम्ना नाम, सर्गनाम तु सर्गोपादेयकथयैव । एतादृशलक्षणलक्षितं हि महाकाव्यं सौभाग्याय भवति।

४.१ इतिहासः

संस्कृतसाहित्यजगति महाकाव्यस्य विकासः कदाप्रभृत्यभूदिति तु न पार्यते निश्चयेन वक्तुम् । एतावदेव निश्चितं यद् वाल्मीकिः हि लौकिकसंस्कृतसाहित्यस्य

Scanned with CamScanner

। अत्र हि नायको धीरोदात्तगुणान्वितः सद्वंशक्षत्रियो रामः । अत्र हि वीरो मुख्यो रसः शृङ्गारादयश्चान्येऽङ्गानि फलश्चास्य धर्मः । वस्तुनिर्देश एवास्य प्रारम्भवाक्यं यथा -

कोशलो नाम मुदितः स्फीतो जनपदो महान्।

निविष्टः सरयूतीरे प्रभूतधनधान्यवान् ।।

आदिमहाकाव्यमिदं -

धर्म्यं यशस्यमायुष्य राज्ञाञ्च विजयावहम्।

आदिकाव्यमिदं चार्षं पुरा वाल्मीकिना कृतम्।। इति ।।

धर्मो यथा -

सामं दानं क्षमा धर्मः सत्यं धृतिपराक्रमौ ।

पार्थिवानां गुणा राजन् दण्डश्चाप्यपकारिषु।।

राजहा ब्रह्महा गोघ्नश्चोरः प्राणिवधे रतः।।

नास्तिकः परिवेत्ता च सर्वे निरयगामिनः।।

अर्थो यथा - भूमिहिरण्यं रूपञ्च विग्रहे कारणानि च।

कामो यथा - ततः पर्वतशृङ्गाणि वनानि विविधानि च ।

पश्यन् सह मया कामी दण्डवान् विचरिष्यसि।।

ऋतुवर्णनं यथा हेमन्तस्य -

वसतस्तस्य तु सुखं राघवस्य महात्मनः।

शरद्व्ययाये हेमन्त ऋतुरिष्टः प्रवर्तते।।

अयं स कालः सम्प्राप्तः प्रियो यस्ते प्रियंवद।

अलङ्कृत इवाभाति येन संवत्सरः शुभः।।

नीहारपरुषो लोकः पृथिवी सस्यमालिनी।

जलान्यनुपयोग्यानि सुभगो हव्यवाहनः ।।

सेवमाने दिशं सूर्ये दिशमन्तकसेविताम्।

विहीनतिलकेव स्त्री नोत्तरा दिक् प्रकाशते।।

प्रकृत्या हिम शाढ्यो दूरसूर्यश्च साम्प्रतम्।

Scanned with CamScanner

यथार्थनामा सुव्यक्तं हिमवान् हिमवान् गिरिः।।
रविसङ्क्रान्तसौभाग्यस्तुषारारुणमण्डलः।
निःश्वासान्ध इवादर्शश्चन्द्रमा न प्रकाशते ।।
अवश्यायतमीनद्धा नीहारतमसावृताः।
प्रसुप्ता इव लक्ष्यन्ते विपुष्पा वनराजयः।।

यद्यपि महाभारतेऽपि काव्यात्मकत्वं विलसत्येव तथापि न तथा तत्र काव्यलक्षणं घटते यथा रामायणे । तत्र हि बहवो नायकाः, वस्तुनिर्देश एव प्रारम्भवाक्यं वीरो हि मुख्यो रसो जये शान्तो महाभारते । फलञ्चास्य धर्म एव । अत्र हि पूर्वभागे युधिष्ठिराभिषेकान्ता कथा वीररसप्रधाना, उत्तरभागं समावेश्य तु शान्तरसस्य प्राधान्यम् । रामायणेऽपि पूर्वकाण्डपर्यन्ता कथा वीररसप्रधाना उत्तरकाण्डं समावेश्य तु करुणरसस्य प्राधान्यम् ।

संस्कृतजगतः महाकाव्येषु महाभारतानन्तरं जाम्बवतीविनयं समुदेति । इदं उच्यते यत्, संस्कृतकाव्यस्य उदयस्तु प्रशान्तपावने तपोवनेऽजायत, किन्तु तस्य विकासो हि राज्ञां प्रासादेष्वेव समभवदुपरतञ्च तद्राजप्रासादानां विनाशेन सहैव इति। कथ्यते हि पाणिनेः उदयाय प्रद्योतस्य नन्दिवर्द्धनस्य, वररुचेरुदये प्रद्योतस्यैव नन्दिनः, पतञ्जलेरुदयाय शुङ्गस्य पुष्यमित्रस्य, भासस्योदये राजसिंहस्य, कालिदासस्योत्कर्षाय विक्रमस्य, अश्वघोषोदये कनिकस्य, भारवेरुत्कर्षाय पुलकेशिद्वितीयस्य विष्णुवर्द्धनस्य, भट्टरुत्कर्षाय श्रीधरनरेन्द्रस्य, बाणस्योदये हर्षवर्द्धनस्य, माघस्योदयाय भोजाख्यस्य कस्यचिद् गुर्जरेश्वरस्य, रत्नाकरस्यावस्थानेऽवन्तिवर्मणः काश्मीरकस्य, श्रीहर्षस्योदये जयचन्द्रस्य कान्यकुब्जेश्वरस्य, विह्लणस्योदये चालुक्यस्य विक्रमादित्यस्य, जगन्नाथोदयाय शाहजहानस्य भूमिका दरीदृश्यते। वस्तुतस्तु कवयो हि द्विविधोद्देश्यपूर्तये राज्ञ आश्रयन्ते स्म । प्रथमं तु तेषां राजाश्रयेणाजीविकासमस्या समाहिता भवति स्म । अपरञ्च, तत्र तेषां ग्रन्थपरीक्षका अपि सुलभा भवन्ति स्म । यथा स्मरति राजशेखरः "श्रूयते हि पाटलिपुत्रे

Scanned with CamScanner

प्रहरकमपनीय स्वं निद्रासितोच्चैः प्रतिपदमुपहूतः केनचिज्जागृहीति।

मुहुरविशदवर्णां निद्रया शून्यशून्यां दददपि गिरमन्तर्बुध्यते नो मनुष्यः।।

वासः खण्डमिदं प्रयच्छ यदि वा स्वाङ्के गृहाणार्भकं

रिक्तं भूतलमत्र नाथ भवतः पृष्ठे पलालोच्चयः।

दम्पत्योरिति जल्पितं निशि यदा चौरः प्रविष्टस्तदा

लब्धं कर्पटमन्यतस्तदुपरि क्षिप्त्वा रुदन्निर्गतः।।

संस्कृतकाव्ये पाण्डित्यप्रदर्शनापेक्षया रसबन्धस्यैवाध्यवसायो बहुधा प्रवर्तितो दृश्यते । यद्यपि कालिदासापरवर्तिनो हि कवयो ज्ञानगरिमाणमपि स्वकाव्यविषयत्वेन ग्रथ्नन्ति स्म, तथापि तत्रापि रसापेक्षा तु नैव कथमपि क्षीणा वोपेक्षिता दृश्यते । नैषधीयचरिते ज्ञानगरिमा सर्वातिशायित्वेनान्तर्लीनो दृश्यते, तथापि तत्र रसपेशलता सर्वत्र विलसत्येव । न केवलं काव्यसामान्य एवापितु शास्त्रकाव्येष्वपि येषां हि प्रधानमुद्देश्यं व्याकरणशिक्षणमेव भवति रसपेशलतापेक्षितैव दृश्यते ।

सामान्यतः शृङ्गारवीरकरुणशान्तेष्वन्यतम एव रसः काव्यस्याङ्गित्वेन स्वीकृतोऽन्ये तु अङ्गरूपमात्रमेव । तत्रापि महाकाव्ये प्रायो वीरो वा शान्त एव सम्मतः।

४.१ महाकाव्यलक्षणानि

साहित्यदर्पणानुसारम्

सर्गबन्धो महाकाव्यं तत्रैको नायकः सुरः।।३१५।।

सद्वंशः क्षत्रियो वापि धीरोदात्तगुणान्वितः।।

एकवंशभवा भूपाः कुलजा बहवोऽपि वा।।३१६।।

शृङ्गारवीरशान्तनामेकोऽङ्गी रस इष्यते।।

अङ्गानि सर्वेऽपि रसाः सर्वे नाटकसंधयः।।३१७।।

Scanned with CamScanner

इतिहासोद्भवं वृत्तमन्यद् वा सज्जनाश्रयम्।।

चत्वारस्तस्य वर्गाः स्युस्तेष्वेकं च फलं भवेत्।।३१८।।

आदौ नमस्क्रियाशीर्वा वस्तुनिर्देश एव वा।।

क्वचिन्निन्दा खलादीनां सतां च गुणकीर्तनम्।।३१९

एकवृत्तमयैः पद्यैरवसानेऽन्यवृत्तकैः।।

नातिस्व ल्पा नातिदीर्घाः सर्गा अष्टाधिका इह।।३२०।।

नानावृत्तमयः क्वापि सर्गः कश्चन् दृश्यते।

सर्गान्ते भाविसर्गस्य कथायाः सूचनं भवेत्।।३२१।।

सन्ध्यासूर्येन्दुरजनीप्रदोषध्वान्तवासराः।

प्रातर्मध्याह्नमृगयारात्रिवनसागराः।३२२।।

संभोगविप्रलम्भौ च मुनिस्वर्गपुराध्वराः।।

रणप्रयाणो यज्ञम न्त्रपुत्रोदयादयः।।३२३।।

वर्णनीया यथायोगं साङ्गोपाङ्गा अमी इह।

कर्वेवृत्तस्य वा नाम्ना नायकस्यान्यतरस्य वा।३२४।।

नामास्य सर्गोपादेयकथया सर्गनाम तु।।ड५.

अर्थात् -

प्रमुखानि -

१. महाकाव्यस्य कथा सर्गेषु विभक्ता भवति।

२. अस्य नायकः अनेकाः देवताः अथवा धीरोदात्तगुणैः युक्ताः अनेके उच्च-कुलोत्पन्नाः क्षत्रियाः भवेयुः। एकस्मिन् वंशे समुद्भूताः अनेके नायकाः अपि अस्य नायकाः भवितुम् अर्हन्ति।

३. एतस्मिन् शृङ्गारः, वीरः, शान्तः इत्येतेषु त्रिषु रसेषु कश्चन एकः रसः प्रधानो भवेत्, अन्ये च रसाः तस्य रसस्य सहायकाः स्युः।

गौणानि -

४. नाटकस्य सर्वाः सन्धयः (मुख-प्रतिमुख-गर्भ-विमर्श-उपसंहृतयः) भवेयुः।

५. काव्यस्य कथानकः ऐतिहासिको भवति। यदि ऐतिहासिकः नास्ति, तर्हि

Scanned with CamScanner

७. एतस्य आरम्भ नमस्कारस्य, आशीर्वचनस्य, मुख्यकथावस्तोः च सङ्केतरूपेण निरूपकं मङ्गलाचरणं भवेत्।

८. एतस्मिन् प्रसङ्गानुसारं दुष्टानां निन्दा, सज्जनानां च प्रशंसा भवेत्।

९. एतस्मिन् सर्गाणां सङ्ख्या अष्टतः अधिका, तेषां सर्गाणाम् आकारश्च अतीव लघुः न भवेत्। प्रायः प्रत्येकं सर्गे समानस्य छन्दसः प्रयोगः भवेत्। सर्गस्य अन्ते छन्द-परिवर्तनम् उचितं मन्यते। कुत्रचित् सर्गेषु विविधानि छन्दांसि प्रयुक्तानि दरीदृश्यन्ते। प्रत्येकं सर्गस्य अन्ते आगामिनः सर्गस्य कथावस्तोः सूचना भवेत्।

१०. एतस्मिन् सन्ध्या, सूर्यः, चन्द्रः, रात्रिः, प्रदोषः, अन्धकारः, दिनं, प्रातःकालः, मध्याह्नः, मृगया (आखेटः), ऋतुः, वनं, समुद्रः, मुनिः, स्वर्गं, नगरं, यज्ञः, युद्धः, यात्रा, विवाहः, मन्त्रः, पुत्रः, अभ्युदयः इत्यादीनां यथावसरे साङ्गोपाङ्गं वर्णनं भवेत्।

११. महाकाव्यस्य नामकरणं कवेः, कथावस्तोः, नायकस्य उत कस्यचित् अन्यचरित्रस्य नाम्ना भवेत्। सर्गाणां नाम सर्गगतकथायाः आधारेण भवेत्।

एवं प्रायः प्रत्येकं शास्त्रकाराः स्वस्य समये उपलब्धमहाकाव्यानाम् आधारेण महाकाव्यस्य लक्षणानां विधानं कृतवन्तः। परन्तु अधिकांशः आधुनिकविचारकाः विश्वनाथस्य विचारान् प्रामाणिकत्वेन अङ्गीकुर्वन्ति। परवर्तिमहाकाव्येषु तु विश्वनाथस्य मतम् अधिकाधिकं ग्राह्यं मन्यते। गौणानि लक्षणानि क्वचिद् व्यभिचरन्ति। यथा -

१ हरविजयकाव्ये ५० सर्गाः सन्ति।

२ नैषधस्य कतिपयसर्गेषु द्विशताधिकानि पद्यानि विद्यन्ते ।

३ भट्टिकाव्यस्य प्रथमे सर्गे २७ पद्यानि सन्ति।

४.४ पचमहाकाव्यानि।

कवयतीति कविः, तस्य कर्म काव्यम्। एतत् काव्यं गद्य—पद्य—मिश्रभेदेन त्रिविधं भवति। तत्रा पद्यस्य बहवः भेदाः सन्ति। तेषु अन्यतमं भवति महाकाव्यम्। महाकाव्यमधिकृत्य ईशानसंहितायात् एवमुंक्त भवति—

अष्टसर्गात्रा तु न्यूनं त्रिंशत्सर्गाच्च नाधिकम्।

Scanned with CamScanner

प्रसिद्धालङ्कारिकेण दण्डिमहाशयेन स्वस्य काव्यादर्शस्य प्रथमपरिच्छेदे महाकाव्यस्य समग्रं लक्षणम् एवमुक्तम्—

सर्वबन्धो महाकाव्यमुच्यते तस्य लक्षणम्।

आशीर्नमस्क्रियावस्तुनिर्देशो वापि तन्मुखम्।।

इतिहासकथोद्भूतमितरद्वा सदाश्रयम्।

चतुर्वर्गफलायत्तं चतुरोदात्तनायकम्।।

नगरार्णवशैलर्त्तुचन्द्रार्कोदयवर्णनैः।

उद्यान सलिल क्रीडा मधुपानरतोत्सवैः।।

विप्रलमभैर्विवाहैश्च कुमारोदय वर्णनैः।

मन्त्रादूतप्रयाणाजिनायकाभ्युदयैरपि।।

अलङ्कृतमसङ्क्षिप्तं रसभावनिरन्तरम्।

सर्गैरनतिविस्तीर्णैः श्रव्यवृत्तैः सुसन्धिभिः।।

सर्वत्रा भित्रावृत्तान्तैरूपेतं लोकरज्जकम्।

काव्यं कल्पान्तरस्थायि जायते सदलङ्कृति।। इति ।

महाकाव्यानि सर्गयुक्तानि भवेयुः। तेषाम् आरम्भे आशीर्वादपद्यं वा, नमस्क्रियापद्यं वा, वस्तुनिर्देशपद्यं वा कर्तव्यम्। नगरस्य, समुद्रस्य, पर्वतस्य, ऋतूनां, सूर्यचन्द्रयोः उदयस्य च वर्णनं करणीयम्। उद्यानं, जलक्रीडा, मधुपानं, सम्भोगविप्रलम्भशृङ्गारौ, विवाहः, पुत्राजन्म, मन्त्राः, दूतः विजययात्रा, युद्धः, नायकोदयः—इत्येतेषां वर्णनैः युक्तानि भवेयुः। अत्रा रसभाववृत्तसन्ध्यादयश्च अवश्यं करणीयः। एतया रीत्या निर्मितानि महाकाव्यानि कल्पावसानपर्यन्तस्थायीनि जायन्ते।

संस्कृतकाव्यप्रपचे प्रचलितानां महाकाव्यानां मध्ये पचमहाकाव्यानि प्रसिद्धानि भवन्ति। तानि यथाा —

१. कालिदासस्य रधुवंशः।

२.कलिदासस्य कुमारसम्भवम्।

३.भारवेः किरातार्जुनीयम्।

Scanned with CamScanner

अभिज्ञानशाकुन्तलम्, मालविकाग्निमित्राम्, विक्रमोर्वशीयम् इति त्रीणि नाटकानि च विरचितानि।

संस्कृतसाहित्ये वर्तमानेषु पचमहाकाव्येषु रघुवंशः प्रथमस्थानमलङ्करोति। तत्रा एकोनविंशतिसर्गाः सन्ति। कालिदासस्य उपमाप्रयोगस्य सुप्रसिद्धानि उदाहरणानि अस्मिन् काव्ये द्रष्टुं शक्यन्ते। 'दीपशिखा कालिदासः' इति प्रसिद्धोक्ते' उदाहरणं रघुवंशात् उद्धृतम् एव। अलङ्कारसंयोजने, प्रकृतिसौन्दर्यस्य वर्णनायां, ललितपदविन्यासे च कालिदासः अतीव वैदग्ध्यं प्रकटितवान्।

रघुवंशमहाकाव्यं वागर्थौ इव मिलितयोः पार्वतीपरमेश्वरयोः वन्दनया एव आरभते। अत्रा वंशस्थापकस्य रघो' पितुः दिलीपमहाराजस्य कथायाः आरभ्य अग्निवर्णपर्यन्ते-कोनत्रिंशन्महाराजानां कथा अतिमानेहररीत्या वर्ण्यते। तत्रात्य आदिमसप्तदशसर्गेषु दिलीपादारभ्य अतिथिपर्यन्तसप्तमहाराजानां कथा विस्तरेण प्रतिपाद्यते। अष्टादशसर्गे

Scanned with CamScanner

उपवर्णिता। अष्टमसर्गपर्यन्तमेव इदं काव्यं कालिदासेन विनिर्मितमिति बहूनां पण्डितानां मतम्। किंच कालिदासकृतीनां व्याख्यात्रा मल्लिनाथेन अष्टमसर्गपर्यन्तमेव व्याख्याते। किन्तु सप्तदशसर्गयुक्तकुमारसम्भवं महाकाव्य। कालिदासविरचितम् अद्य उपलभ्यते।

किरातार्जुनीयम्

संस्कृतसाहित्ये अलङ्कृतशैल्याः प्रवर्तकस्यापि भारवेः ध्यानं विशेषरूपेण अर्थगौरवे स्थितम्। अत एव 'भारवेरर्थगौरवम्' इति लोकोक्तिः अत्यन्तख्यातिं प्राप्ता। कविवरः भारविः विपुलान् ललितेषु शब्देषु सन्निवेश्य स्वस्य काव्यकुशलतां प्रकटीकरोति। भारवेः जीवनकालमधिकृत्य विभिन्नमतानि सन्ति। तथापि सः क्रिः व. षष्ठशतके जीवनमधारयदिति विद्वांसः मन्यन्ते।

सर्वविधलक्षणयुक्ते किरातार्जुनीयमहाकाव्ये अष्टादशसर्गाः सन्ति। महाभारतस्य वनपर्वादुद्धृतः अर्जुनस्य पाशुपतास्त्राप्राप्तिवृत्तान्तः अस्य इतिवृत्तम्। द्यूते पराजिताः युधिष्ठिरादयः वनवासपूर्त्यर्थं द्वैतवनं प्राप्तवन्तः। तत्रास्थाः ते दुर्योधनवृत्तान्तं विप्रवेषध-ारिणः कस्मच्चित् किरातदूतात् ज्ञात्वा दुर्योधनं प्रति युद्धं कर्तुं निश्चयं कुर्वन्ति। तदर्थं व्यासनिर्देशानुसारं अर्जुनः शिवात् पाशुपतास्त्रालाभाय हिमालये घोरतपः कुर्तम् आरब्धवान्। अर्जुनं परीक्षितुं शिवः किरातवेषेण तत्रा आगच्छति। शूकरवधमधिकृत्य

Scanned with CamScanner

कपर्वतस्य षट्ऋतूनां, जलक्रिडायाः, प्रभातस्य, यमुनानद्याश्च वर्णनं दृश्यते। अनन्तरं कृष्णपाण्डवसमागमः, श्रीकृष्णस्य नगरप्रवेशः, शिशुपालस्य क्रोधः, युद्धाय सन्नद्धता, दूतसंवादः, प्रयाणं, युद्धम्, अन्तिमे शिशुपालस्य वधः च माघेन अतिमनोहररीत्या उपवर्णिताः। नवनवशब्दानां प्रयोबाहुल्येन 'नवसर्गे गते माघे नवशब्दो न विद्यते' इति लोकोक्तिः अतिशयेन प्रचलिता।

नैषधीयचरितम्

नैषधीरचरितमहाकाव्यस्य कर्ता श्रीहर्षः भवति। सः कान्यकुब्जाधीश्वरयोः विजयचन्द्रजयचन्द्रयोः सभापडितः आसीत्। तस्य जीवनकालः द्वादशशतकं भवति। तस्य पिता हीरः माता मामल्लदेवी च भवति।

पचमहाकाव्येषु प्रौढं श्रेष्ठं च भवति नैषधीयचरितम्। तत्रा द्वाविंशतिसर्गाः सन्ति। अस्य इतिवृत्तं महाभारतस्य नलोपाख्यानात् स्वीकृतमेव। नलश्रीवर्णनादारब्धमिदं महाकाव्यं नलदमयन्त्योः सुखसङ्गमं प्राप्य विश्राम्यति। तत्रा प्रथमे दमयन्त्याः स्मृत्या विहरन् नलः एकं स्वर्णमयं हंसं पश्यति, तं गृह्णाति च। हंसः स्वामवस्थां निवेद्य मोचनं प्रार्थयति। राज्ञः प्रीत्यर्थं हंसः विदर्भानगरीं गत्वा तस्य अनुरागं दमयन्तीं प्रति ज्ञापयति। किन्तु तत्समये विदर्भराजेन दमयन्त्याः स्वयंवरसभा आयुज्यते। यद्यपि तत्रा चत्वारः दिक्पालाः नलरूपं धृत्वा आगच्छन्ति, तथापि दमयन्त्याः नलं प्रति अनुरागं ज्ञात्वा ते स्वस्वरूपाण्येव गृह्णन्ति। ततः दमयन्ती नलं स्वयंवरजा विभूषयति। अथ ईर्ष्यया कलिः नलं प्रविश्य तं विरूपयति। अन्ते लब्धस्वरूपेण नलेन सह दमयन्त्याः सुखसङ्गमो भवति च।

अस्य काव्यस्य शैली, वर्णनारीतिः, पदानां प्रयोगाश्च अतिक्लिष्टं भवति। एवं-कृतवैशिष्ट्यात् एवमुच्यते 'नैषधं विद्वदौषधम्' इति। काव्यानुशीलनार्थं साहित्यपठितृभिः उपयुक्तः आदिग्रन्थो भवति नैषधीयचरितम्। अत एव उक्तम् 'उदिते नैषधे काव्ये क्व माघः क्व च भारविः' इति।

इतराणि महाकाव्यानि

१.बुद्धचरितम् — क्रैस्तवीयस्य एकशतकस्य उत्तरार्धे निवसन् अश्वघोषः कनिष्कसभाङ्गः आसीत्। सुवर्णाक्षीपुत्राः सः बौद्धश्च भवति। तेन बुद्धचरितम्, सौन्दरनन्दम् इति काव्यद्वयं, शारीपुत्राप्रकरणं च विरचितम्।

प्रसिद्धीकृते बुद्धचरिते त्रायोदशसर्गाः सन्ति। किन्तु चीनपाठै अष्टविंशतिसर्गाः सन्ति इति श्रूयते। बौद्धेन संस्कृते विरचितं प्रथमं महाकाव्यं भवति बुद्धचरितम्। श्रीबुद्धस्य

Scanned with CamScanner

२.सौन्दरनन्दम् — अष्टादशसर्गयुक्ते अस्मिन् काव्ये श्रीबुद्धस्य अर्धसोदरस्य नन्दस्य जीवनचरितं पगतिपादयति। नन्दस्य पत्नीं प्रति स्नेह:, बौद्धधर्मस्वीकारे विमुखता, बुद्धशिष्येण आनन्देन नन्दस्य परिवर्तनं, नन्दपत्न्या: विलाप: इत्यादय: अत्रा उपवर्णित:।

३.सेतुबन्धम् — सेतुबन्धस्य कर्ता प्रवरसेन: भवति। हर्षचरितस्य आमुखे बाण: प्रवरसेनम् एवं स्मृतवान्—

कीर्ति: प्रवरसेनस्य प्रयाता कुमुदोज्ज्वला।

सागरस्य परं पारं कपिसेनेव सेतुना।। इति।।

अस्मात् श्लोकसूचनात् प्रवरसेनस्य जीवनकाल: क्रि. व. पचशतकमिति ज्ञातुं शक्यते।

सेतुबन्धं महाकाव्यं रावणवधम् अथवा सेतुकाव्यम् इति नाम्नापि विश्रुतम्। प्राकृतभाषायं विलिखिते अस्मिन् काव्ये रामायणकथा विस्तरेण अतिमनोहररीत्या प्रतिपाद्यते।

४. पद्यचूडामणि: — बुद्धघोषेण विरचितं महाकाव्यं भवति पद्यचूडामणि: स: क्रि. व. पचशतके जीवनमधारयदिति विद्वांसै: मन्यन्ते। अस्मिन् महाकाव्ये दशसर्गा: सन्ति।

५.जानकीहरणम्— जानकीहरणस्य कर्ता कुमारदास: भवति। क्रि. व. षष्ठशतकस्य पूर्वार्धे निवसन् सिलोणराजा कुमारदास: एव भवति अस्य कर्ता इति केषाचनपण्डितानां मतम्। स: सम्यग्रीत्या कालिदासं अनुकरोति इति जानकीहरणपठनात् ज्ञातुं शक्यते। तत्रा विंशतिसर्गा: सन्ति। रामायणकथा—प्रतिपादके अस्मिन् काव्ये काशिकावृत्त्यनुसारा: व्याकरणविशेषा: अपि द्रष्टुं शक्यन्ते।

६.भट्टिकाव्यम् — भट्टि: कि. व. सप्तशतके जीवनमधारयत् इति विद्वांसै: मन्यन्ते। रावणवधो नाम महाकाव्यस्य कर्ता भवति भट्टि:। भट्टिना विरचितत्वात् एतत् महाकाव्यं भट्टिकाव्यम् इति प्रसिद्धम्। तत्रा द्वाविंशतिसर्गा: सन्ति। तत्रा रामायणकथा विस्तरेण प्रतिपाद्यते।

७. गौडवहो — क्रि. व. अष्टशतके निवसन् वाक्पतिराज: कानौज्देशस्य महाराजस्य यशोवर्मण: सभापण्डित: आसीत्। तेन गौडवहो इति प्राकृतमहाकाव्यं मधुमथन विजयं च विरचितम्। तयो: मधुमथनविजयम् अधुना नोपलभ्यते। गौडवहोमहाकाव्ये यशोवर्ममहाराजस्य गौडराजकुमारं प्रति विजय: विस्तरेण ललितपदविन्यासेन उपन्यस्यते।

८.धर्मशर्माभ्युदयम् — धर्मशर्माभ्युदयस्य कर्ता हरिश्चन्द्र: भवति। स: नवमशत-

Scanned with CamScanner

१२. नवसाहसाङ्कचरितम् — नवसाहसाङ्कचरितस्य कर्ता पद्मगुप्तः भवति। सः परिमलः इति नाम्नापि प्रस्तूयते। सः क्रि. व. एकादशशतके जीवनमकरोत्। सः धारादेशस्य सिन्धुराजस्य सभापण्डितः आसीत्। सिन्धुराजस्य 'नवसाहसाङ्कः' इति बिरूदमस्ति। तस्य निर्देशानुसारमेव पद्मगुप्तः एतत्काव्यं विरचितवान्।

१३. विक्रमाङ्कदेवचरितम् — बिल्हणेन विरचितं महाकाव्यं भवति विक्रमाङ्-

Scanned with CamScanner

२०. कुमारपालचरितम् — हेमचन्द्रेण विरचितं काव्यं भवति कुमारपालचरितम्। तस्य कालः क्रि. व. द्वादशशतकमिति श्रूयते। इदं काव्यम् ऐतिहासिककाव्येषु अन्यतमत्वेन पण्डितैः गण्यते।

२१. श्रीकण्ठचरितम् — अस्य कर्ता मङ्खकः भवति। सः क्रि. व. द्वादश-शतकमध्ये जीवनमकरोत्। मङ्खकः अलङ्कारसर्वस्वस्य कर्तुः रुय्यकस्य शिष्यः आसीत्। पचविंशतिसर्गैर्युक्ते श्रीकण्ठचरितम् शिवस्य त्रिपुरदहनं विस्तरेण प्रतिपाद्यते।

२२ण्   राघवपाण्डवीयम् — कविराजेन विरचितं महाकाव्यं भवति राघव-पाण्डवीयम्। सः क्रिः व. द्वादशशतके जीवनमधारयदिति ए. बि. कीथ् महाशयस्य

Scanned with CamScanner

२८. सहृदयानन्दम् — अस्य काव्यस्य कर्ता कृष्णानन्दः भवति। अस्मिन् काव्ये पचदशसर्गाः सन्ति। अत्रा नलकथा ललितपदविन्यासेन अलङ्कारप्रयोगेण च उपन्यस्यते।

२९. मधुराविजयम् — अस्य कर्त्री गङ्गादेवी भवति। तस्याः जीवनकालः क्रि. व. चतुर्दशशतकमासीत्। विजयनगरस्य राज्ञः कम्पणस्य कथा अस्मिन् काव्ये विस्तरेण प्रतिपाद्यते।

३०.श्रीकृष्णविलासम् — सुकुमारकविविरचितं महाकाव्यं भवति श्रीकृष्णविलासम्। तस्य कालः क्रि. व. पचदशशतकमिति विद्वांसैः मन्यते। द्वादशसर्गैर्युक्ते

Scanned with CamScanner

३८. पतञ्जलिचरितम् — (अष्टसर्गाः) रामभद्रदीक्षितः (अष्टादशशतकम्)।

४.५ उपसंहारः

महाकाव्येन अष्टाधिकसर्गेषु विभक्तेन भाव्यम् । अत्र हि एको नायकः सुरो वा क्षत्रियः, बहवो वा सद्वंशक्षत्रियाः भूपा नायकाः । नायकेन हि धीरोदात्तप्रकृतिकेन भाव्यम्, शृङ्गारवीरशान्तानामेकोऽङ्गी रसः, अन्ये रसा अंगान्येव, सर्वेऽपि नाटकसन्धयः, वृत्तं त्वैतिहासिकं वा तदितरदापि सज्जनाश्रयं, चतुर्णामेव वर्गाणां साधनं फलं तु तेष्वेक, आशीर्नमस्क्रियां वस्तुनिर्देशो वा प्रारम्भवाक्यं, सतां गुणसंकीर्तनं खलानां निन्दा च, प्रतिसर्गं हि भाविसर्गकथासंसूचकमवसानं, यथायोगं सन्ध्या-सूर्य-इन्दु-रजनी-प्रदोष-ध्वान्त-वासर-प्रातर्मध्याह्नमृगयाशैलः तु वन-सागर-सम्भोग-विप्रलम्भ-मुनि-स्वर्ग-पुराध्वररणप्रयाणोपयममन्त्रपुत्रोदयादयः साङ्गोपाङ्गं वर्णनीयाः । अस्य नाम वृत्तस्य कवेर्नायकस्य वा नाम्ना नाम, सर्गनाम तु सर्गोपादेयकथयैव । एतादृशलक्षणलक्षितं हि महाकाव्यं सौभाग्याय भवति।

कवयतीति कविः, तस्य कर्म काव्यम्। एतत् काव्यं गद्य—पद्य—मिश्रभेदेन त्रिविधं भवति। तत्रा पद्यस्य बहवः भेदाः सन्ति। तेषु अन्यतमं भवति महाकाव्यम्। महाकाव्यानि सर्गयुक्तानि भवेयुः। तेषाम् आरम्भे आशीर्वादपद्यं वा, नमस्क्रियापद्यं वा, वस्तुनिर्देशपद्यं वा कर्तव्यम्। नगरस्य, समुद्रस्य, पर्वतस्य, ऋतूनां, सूर्यचन्द्रयोः उदयस्य च वर्णनं करणीयम्। उद्यानं, जलक्रीडा, मधुपानं, सम्भोगविप्रलम्भशृङ्गारौ, विवाहः, पुत्राजन्म, मन्त्राः, दूतः विजययात्रा, युद्धः, नायकोदयः—इत्येतेषां वर्णनैः युक्तानि भवेयुः। अत्रा रसभाववृत्तसन्ध्यादयश्च अवश्यं करणीयः। एतया रीत्या निर्मितानि महाकाव्यानि कल्पावसानपर्यन्तस्थायीनि जायन्ते।

४.६ प्रश्न परीक्षते

१. संस्कृतसाहित्यजगति महाकाव्यस्य विकास व्याख्याति करोति।

२. रधुवंशः , कुमारसम्भवम् विवृणोति करोति।

३. किरातार्जुनीयम् विवृणोति करोति।

❖❖❖

Scanned with CamScanner

अध्याय:४

वैदिकसाहित्यम् इतिहासश्च

५.० प्रस्तावना

एतत् अध्याय उत्तर अध्यायिन् विद्यार्थिन् समर्थ

नाट्यशास्त्रम् परिचयः ;

ासः अश्वघोषः परिचयः ;

शूद्रक भट्टनारायणः श्रीहर्षः परिचयः ;

विशाखदत्तःपरिचयः ;

५.१ प्रस्तावना

नाट्यशास्त्रम् इति एकः प्राचीनग्रन्थः द्विसहस्रवर्षेभ्यः पूर्वमेव भरताचार्येण कृतः अस्ति । तस्मिन् ग्रन्थे सः नाट्यस्वरूपं नाटकलक्षणं च सम्यक् उक्तवान् । धनञ्जयः नामकः पण्डितः 'दशरूपकम्' इति ग्रन्थं विलिख्य रूपकाणां परिचयं कारितवान् ।

प्रथमं कविना गद्यपद्ययुक्तः, सम्भाषणात्मकः, अभिनययोग्यः कश्चन ग्रन्थः लिख्यते । तत्रत्या कथा रामायणादिषु प्रसिद्धा वा भवेत्, कविकल्पिता वा भवेत् । सः ग्रन्थः नटैः रङ्गे अभिनीयते । एषः अभिनयः, 'प्रयोगः' इति कथ्यते । सहृदयाः सामाजिकाः तं दृष्ट्वा आनन्दमनुभवन्ति । नाटके चतुर्विधाः अभिनयाः भवन्ति - आङ्गिकः, वाचिकः, आहार्यकः, सात्त्विकः चेति । हस्तपादनेत्रादिभिः यः अभिनयः क्रियते सः आङ्गिकः । भाषणं वाचिकः । वेषभूषणादिकम् आहार्यकः । गात्रकम्पनम्, स्वेदः इत्यादयः सात्त्विकाभिनयाः । एतादृशैः अभिनयैः नटाः प्रेक्षकेषु नव रसान् उत्पादयन्ति ।

संस्कृतनाटकेषु प्रथमम् एकं मङ्गलपद्यं भवति । 'नान्दी' इति तस्य नाम । तदनन्तरं सूत्रधारः प्रविशति । सः नाटके अभिनेष्यमाणायाः कथायाः सूचनां ददाति । तदनन्तरं नाटकस्य प्रारम्भः भवति । संस्कृतनाटके उत्तमजनाः संस्कृतेन, नीचजनाः स्त्रियः च प्राकृतेन भाषन्ते । रङ्गे जलपानं, भोजनं, अग्निः, युद्धम् इत्येतादृशाः विषयाः न दर्शनीयाः इति नियमः अस्ति । नाटकस्य अन्ते एकः श्लोकः भवति । प्रायः नायक एव इमं श्लोकं पठति । अस्मिन् श्लोके 'लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु' इत्येतादृशम् अर्थपूर्णं मङ्गलाशंसनं भवति । अस्य श्लोकस्य 'भरतवाक्यम्' इति नाम ।

Scanned with CamScanner

संस्कृतनाट्यवाङ्.मयपरिचय:

निखिलेऽपि विश्वसाहित्ये संस्कृतनाट्यवाङ्.मय महीयते, नाऽत्र कापि संशीति:। कलिकातोच्चन्यायालयस्य न्यायाधीश: श्रीमान् विलियमजोन्समहोदय: चतुरशीत्यधिकसप्तदशशततमे ख्रिस्ताब्दे कालिदासप्रणीतं नाटकमभिज्ञानशाकुन्तलम् आंग्यभाषया अनूदितवान्। पश्चात् एकनवत्यधिकसप्तदशशततमे ख्रिस्ताब्दे जानफास्टररस्तमेव आंग्लानुवादं शर्मण्यभाषयाऽनूदितवान्। अयमेवाऽनुवादो महाकविना समीक्षकमूर्द्धन्येन गेटेमहोदयेन पठित:।

अभिज्ञानशाकुन्तलमधीत्यैव जर्मनभाषाकविर्गेटे निरतिशयानन्दबिह्वलो जात:। स खलु नाटकेऽस्मिन् स्वर्गपृथ्व्यो: संगमनं ददर्श। गेटेमहोदयेन ग्रंथस्यास्य या समीक्षा कृता तया भारतीयनाट्यकलाया: मेधाया: प्रतिभायाश्च वर्चस्वं प्रकाशितं जातम्। अकस्मादेव विश्वस्य विपश्चिन्निकायो भारतं प्रति श्रद्धावान् संजात:। संस्कृताध्ययनं प्रति शतमितानां पाश्चात्त्यानां रुचिर्जजागार। बर्लिन-लिपजिग-लीडन-एडिनबर्गादिनगरेषु संस्कृताध्ययनपीठानि संस्थापितानि जातानि। कतिपयवर्षेष्वेव राथ-विल्सन फग्र्युसन-कालब्रुक-स्टेनकोनो-पिशेल-ल्यूडर्स-वेबर-कीथ-मैकडानेल-कार्न-हार्टले-ग्रिम-ग्रासमान-बर्नर-ह्विटनी-मैक्समूलर-सिल्वालेवीप्रभृतयो महान्त: संस्कृतज्ञा: पाश्चात्त्यराष्ट्रेषु समुत्पन्ना:। एकोनविंशतमे ख्रिस्ताब्दे समग्रमेव विश्वं संस्कृतमय जातम्। लक्षमिता: संस्कृतस्य ताडपत्रांकिता हस्तलेखा अन्विष्टा: पाश्चात्त्यविद्वद्भि:। देववाणीयं विश्वभाषा समुद्घुष्टा।

गेटेमहोदयेन अभिज्ञानशाकुंतलस्य बृहती समीक्षा कृताऽऽसीत्। तस्या: समीक्षाया निष्कर्षं महामहोपाध्याय: वासुदेवविष्णुर्मिराशी एकेनैव पद्येन प्रकाशितवान्-

वासन्तं कुसुमं फलंच युगपद् ग्रीष्मस्य सर्वंच यद्
यच्चान्यन्मनसो रसायनमत: संतपूर्ण मोहनम्।
एकीभूतमभूतपूर्वमथवा स्वर्लोकभूलोकयो-
रैश्वर्यं यदि वांच्छसि प्रियसखे! शाकुंतलं सेव्यताम्।।

विश्वकवि: रवीन्द्रनाथठाकुरोऽपि गेटेसमीक्षामनुमोदमान: कालिदासं प्रति स्वकीयां परां प्रशस्तिं प्रकटयति। स खलु विलियमशेक्सपीयरप्रणीतेन टेम्पेस्टानाम्ना नाटकेन सहाभिज्ञानशाकुंतलस्य तुलनां प्रस्तुवन् कथयति-

टेम्पेस्टनाटके वर्तते भक्ति: शाकुन्तले पुनश्शक्ति:। शक्त्या विजय: प्राप्यते टेम्पेस्टनाटके, शाकुंतले तावन्मंगलेन सिद्धिरवलोक्यते। अर्धमार्गे विरमति टेम्पेस्टनाटकम्, शाकुंतले पुन: पूर्णताया अवसानं वर्तते।

Scanned with CamScanner

कृतनाटकप्रयुक्तां जवनिकां यवनिकां मत्वा, संस्कृतनाटकं यवनपरंपराप्रभावितं मेने। कीथमहोदयोऽपि वीरपूजात एव संस्कृतनाटकं समुत्पन्नं स्वीचकार।

एवं हि विद्वद्भिः विविधानि मतानि प्रस्तुतानि। परंतु सम्प्रति तानि सर्वाण्येव खंडितानि तिष्ठन्ति। भारते छायानाट्यानां काऽपि प्रथैव नासीत् सहस्रद्वयवर्षात्मके कालखंडे केवलमेकमेव नाटकं छायाकोटिकमवाप्यते-सुभटप्रणीतं दूताअंगदमिति

जवनिकाशब्दस्तिरस्करिणीं ज्ञापयति। परंतु नायं शब्दो यवनिकया संगच्छते। यूनानदेशं बोधयितुं संस्कृते यवनशब्दः प्रयुज्यते। यवनी (ऊीाॅर्थे्ब) यवनिका दिशब्दाः यूनानदेशं संकेतयन्ति। परंतु ते सर्वेऽपि जवनिकातस्सर्वथा भिन्ना एव वर्तन्ते। अतएव

याचितवन्तः। देवानां प्रार्थनां स्वीकृत्यैव भगवान् परमेष्ठी सार्ववर्णिकं पंचमं नाट्यवेदं कृतवान्। तद्यथा-

एवं संकल्प्य भगवान् चतुर्वेदाननुस्मरन्।

नाट्यवेदं ततश्चक्रे चतुर्वेदाअंगसम्भवम्।।

जग्राह पाठ्यमृग्वेदात् सामभ्योगीतमेव च।

यजुर्वेदादभिनयान् रसानाथर्वणादपि।।

एवं हि, संस्कृतनाट्यस्य वैदिकी समुत्पत्तिः सिध्यति। पाश्चात्त्यविद्वांसोऽपि प्रायेण नाट्यशास्त्रोक्तं विवरणं प्रामाणिकं मन्यन्ते। तदिदं नाटकं भारतीयपरंपरायां चाक्षुषः क्रतुर्मन्यते, न पुनः सामान्यमनोरंजनमात्रम्। यथाऽह महाकविः कालिदासः

देवानामिदमामनन्ति मुनयः शान्तं क्रतुं चाक्षुषं

रुद्रेणेदमुमाकृतव्यतिकरे स्वांगे विभक्तं द्विधा।

त्रैगुण्योद्भवमत्र लोकचरितं नानारसं दृश्यते

नाट्यं भिन्नरुचेर्जनस्य बहुधाऽप्येकं समाराधनम्।।

त्रिवर्गसाधनं नाट्यमित्यप्युक्तम्। अत्र त्रिवर्गः खलु धर्मार्थकामानां समन्वयः। नाट्येन धर्मस्य, अर्थस्य, कामस्य चाऽपि सिद्धिर्जायते। मोक्षस्यापि सिद्धिर्जायते इति नोक्तम् यतो हि मोक्षपुरुषार्थो मरणानन्तरमेव साधयितुं शक्यते। परंतु मोक्षस्य साधको भवति धर्मः। अतएव नाट्येन धर्मसिद्धो जातायां मोक्षस्यापि सिद्धिर्जातैवाऽअंगीकरणीया। एवं हि, पुरुषार्थचतुष्टयसिद्धिस्त्रोतोभूतमेव नाटकमित्यत्र न काऽपि संशीतिः।

पाश्चात्त्यजगति नाटकं काममेव सामान्यकोटिकं मनोरंजनं भवेत् परंतु भारतीयसमाजे तु नाट्यप्रयोगो धार्मिकमनुष्ठानमेव मन्यते। तत्सर्वं रहस्यं वैशिष्ट्यं वा नाट्यशास्त्रोक्तस्य दैवतपूजनस्याध्ययनेनैव ज्ञातुं शक्यते।

भरतप्रणीतं नाट्यशास्त्रम्-

त्र्यस्र - चतुरस्र-विकृष्टकोटिकं त्रिविधं भवति नाट्यमण्डपं येषु विकृष्टमध्यमकोटिकं (64 ?? 32 हस्तपरिमाणम्) सर्वोत्तमं मन्यते। अस्मिन् नाट्यमण्डपे 32 हस्तपरिमितम् अग्रवर्तिस्थानं दर्शकनिवेशनं भवतिस्म। अवशिष्टं 32 हस्तपरिमितं स्थानं नाट्यमंचस्य कृते सुरक्षितमासीत्। तत्रापि भागत्रयम्। दर्शकनिवेशनस्य समक्षमासीत् रंगपीठम् यमुभयतः सोत्सेधा मत्तवारणी भवतिस्म। रंगपीठमनु भवतिस्म रंगशीर्षम्।

Scanned with CamScanner

च भागे द्वारद्वयं भवतिस्म-एकं नियत्यधिष्ठितम्, अपरं मृत्यवधिष्ठितम्।

एवंगुणविशिष्टमिदं नाट्यवेश्म प्रत्यंगं देवाधिष्ठितं भवति स्म। के के देवाः कुत्र-कुत्र राजन्ते रक्षकरूपेणेत्यस्य बृहद् विवरणं रंगदैवतपूजनाध्याये निरूपितं वर्तते। समग्रस्यापि नाटयमण्डपस्य सुरक्षार्थं वासवप्रहरणस्य जर्जरस्य प्रतिष्ठा क्रियते। पंचपर्वसमन्वितोऽयं जर्जराख्यो वंशदंडोऽपि विधि-शिव-विष्णु-स्कंद-नागाधिष्ठितो भवति। एवं हि, समग्रमेव नाटयभवनं दैवरक्षितं भवति। तदर्थं नाटयप्रयोगात्प्रागेव रंगदैवतपूजनमनिवार्य भवति स्म-

यज्ञेन सम्मितं ह्येतद्रगंदैवतपूजनम्।

अपूजयित्वा रंगं तु नैव प्रेक्षां प्रयोजयेत्।

पूजिताः पूजयन्त्येते मानिता मानयन्ति च।।

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन कर्तव्यं रंगपूजनम्।

न तथाऽऽशु दहत्यग्निः प्रभंजनसमीरितः।

यथा ह्यपप्रयोगस्तु प्रयुक्तो दहित क्षणात्।। (ना.अ.३.९७-१००)

समग्रमेव विश्वं, किंच समस्तब्रह्माण्डमेव व्याप्नोति नाटयमिदम्। स्वयमेवाऽचार्यो भरतो वक्ति-

त्रैलोक्यस्यास्य सर्वस्य नाटयं भावानुकीर्तनम्।

क्वचिद्धर्मः क्वचित्क्रीडा क्वचिदर्थः क्वचिच्छमः।

क्वचिद्धास्यं क्वचिद्युद्धं क्वचित्कामः क्वचिद्वधः।।

धर्मो धर्मप्रवृत्तानां कामः कामार्थसेविनाम्।

निग्रहो दुर्विनीतानां मत्तानां दमनक्रिया।।

क्लीबानां धाष्ट्यजननमुत्साहः शूरमानिनाम्।।

अबोधानां विबोधश्च वैदग्ध्यं विदुषामपि।।

ईश्वराणां विलासश्च स्थैर्यं दुःखार्दितस्य च।

अर्थोपजीविनामर्थो धृतिरुद्विग्नचेतसाम्।।

नानाभावोपसम्पन्नं नानावस्थान्तरात्मकम्।

लोकवृत्तानुकरणं नाट्यमेतन्मया कृतम्।।

उत्तमाधममध्यानां नराणां कर्मसंश्रयम्।

Scanned with CamScanner

विश्रान्तिजननं काले नाट्यमेतन्मया कृतम्।।

धर्म्यं यशस्मायुष्यं हितं बुद्धिविवर्धनम्।

लोकोपदेशजननं नाट्यमेतद् भविष्यति।।

न तज्ज्ञानं न तच्छिल्पं न सा विद्या न सा कला।

न स योगो न तत्कर्म नाट्येऽस्मिन् यन्न दृश्यते।।

सप्तद्वीपानुकरणं नाट्यमेतद् भविष्यति।

येनानुकरणं नाट्यमेतत्तद्यन्मया कृतम्।।

देवानामसुराणां च राज्ञामथ कुटुम्बिनाम्।

ब्रह्मर्षीणांच विज्ञेयं नाट्यं वृत्तांतदर्शकम्।।

योऽयं स्वभावो लोकस्य सुखदुःखसमन्वितः।

सोऽगाद्यभिनयोपेतो नाट्यमित्यभिधीयते।।

वेदविद्येतिहासानामाख्यानपरिकल्पनम्।

विनोदकरणं लोके नाट्यमेतद् भविष्यति।।

नाट्य. अ. 107-20

अनेन विलक्षणाविवरणेन भारतीयअंगमंचस्य माहात्म्यं प्रकटीभवति। वस्तुतः निखिलस्य ब्रह्माण्डस्यैव यथार्थानुकरणं प्रतीयते। नाट्यम्। इमदवस्थानुकरणं कथं सम्भ-वति? अभिनयेन। अभिनयो नाम किम्? अभिसमक्षं नयति प्रापयति प्राचीनं कथावस्तु इत्यभिनयः। आचार्याभिनवगुप्तपादानामियं व्याख्या। सहस्रलक्षवर्षप्राचीनाः रामादयः चतुर्विधाऽभिनयमाध्यमेनैव साक्षात्क्रियन्ते दर्शकैः। चित्रतुरगन्यायेन नररूपान् रामादीन् प्रकृतरूपानेव मन्वाना दर्शकाः साधारणीकरणमहिम्ना रसाप्लुता जायन्ते।

अभिनयस्वरूपम्-

स चाभिनयश्चतुर्विधो भवति-वाचिकः, आगिंकः, सात्त्विकः आहार्यश्च। तत्र वाचिकस्तावत् भारती वृत्तिबहुलः, पात्राणां संवादैः समन्वितो भवति। आंगिकश्चापि

Scanned with CamScanner

।का।लचवस्त्रचमाद्ययद्रूप ाक्रयत बुधः।

सन्धिमो नामविज्ञेयः पुस्तो नाटकसंश्रयः।।

व्याजिमो नामविज्ञेयो यंत्रेण क्रियतेतु यः।

चेष्ट्यते चैव यद्रूपं चेष्टिमः सतु संज्ञितः।।

शैलयानविमानानि चर्मवर्मध्वजाः नगाः।

यानि क्रियन्ते नाट्ये हि स पुस्त इति संज्ञितः।।

-नाट्य. 21.7-9

वस्तुतः न केवलं पुस्तमात्रेणैव नेपथ्यं सम्पाद्यते। तत्राऽपरमपि तत्त्वत्रयं महत्वपूर्णं परिलक्ष्यते-अलंकारः अंगरचना, संजीवश्च। तत्राऽलंकारो यथा-

अलंकारस्तु विज्ञेयो मालाभरणवाससाम्।

नानाविधसमायोगात् योऽगोपाअंगसमन्वितः।।

तत्र माल्यं पंचविधं भवति-चेष्टितं, विततं, संघात्यं, ग्रंथिमं, प्रलम्बितं च। आभरणं भवति चतुर्विधं तद्यथा-आवेध्यं, बन्धनीयं, प्रक्षेप्यम्, आरोपकम्।

आवेध्यं कुण्डलादीनि तथा श्रवणभूषणम्।।

श्रोणिसूत्राअंगदैर्युक्ताबन्धनीयानि निर्दिशेत्।।

प्रक्षेप्यं नूपुरं विद्याद्वस्त्राभरणमेव च।

आरोप्यं हेमसूत्रादि हाराश्च विविधाश्रयाः।।

भूषणानां विकल्पास्तु पुरुषास्त्रीसमाश्रयदृष्ट्या विविधाः देशजातिसमुद्भवाश्च भवन्ति।

Scanned with CamScanner

तथा प्राोषतकान्ता या व्यसनाभिहताश्च याः।

वेषः स्यान्मलिनस्तासामेकवेणीधरं शिरः।।

यद्यपि प्रश्नोऽयं सम्भवति यदाहार्याऽभिनयस्य किं सार्थकत्वम्? अन्येऽभिनयाः चेतनशरीरस्य धर्मभूता भवन्ति। अंगानि शरीरस्यैव भवन्ति। तैः सम्पादितोऽभिनय आगिंकः। वागपि शरीरसम्ब्द्धैव। तया वाचिकोऽभिनयः प्रस्तूयते। सत्त्वमपि सावहितं मनः, शरीरसम्बद्धमेव। तेन सात्त्विकोऽभिनयो विधीयते। परंतु वेषभूषादिकं तु शरीरव्यतिरिक्तमचेतनंच। वस्त्रभरणादीनि यथैव धार्यन्ते तथैवाऽपनीयन्तेऽपि। को नु तत्र विशेषः। का नु तेषां भूमिकाऽभिनये ?

प्रश्नमिमं सम्यक् समाधत्तेऽभिनवभारतीकारः। यद्यपि नेपथ्यं न भवति वागअंगसत्त्वसदृशं चेतनम्। तथापि चेतनपात्रनियमसाहचर्यवशात् तेषामुपर्यपि चैतन्यसमारोपः जायत एव। किंच संवादे समाप्ते एव वार्गाभिनयः, अंगासंचालनेऽवसित एव अंगभिनयः, सत्त्वे शिथिले सत्येव सत्त्वाभिनयोऽवसीयन्ते। परंतु आहार्यन्तु तदवधि जीवति यावन्नापनीयते। किंच राजवेषधरो नटः नाटकानन्तरमपि यत्र कुत्रापि गच्छति, तत्क्षणमेव प्रत्यभिज्ञायते केवलं नेपथ्यमहिम्ना। अतएव नेपथ्यस्य माहात्म्यं सर्वोपरि राराज्यते।

नाट्यप्रयोगे यथा चतुर्विधोऽभिनयः महीयते तथैव करणाअंगहारादयः नृत्तं तु अत्यपेक्षितं तत्त्वं येन विना रूपकावतरणं न सम्भवति। अतएवोक्तं विष्णुधर्मोत्तरपुराणे-

नृत्तमुत्पादितं ह्येतन्मया पद्मनिभेक्षणे।

अंगहारैः सकरणैः संयुक्तं सपरिक्रमैः।।

नृत्तेनाराधयिष्यन्ति भक्तिमन्तस्तु मां शुभे।

त्रैलोक्यस्यानुकरणं नृत्ते देवि प्रतिष्ठितम्।।

-विष्णुधर्मो.3.34.16,16

संस्कृतनाट्यवाड्.मयम्-

अयमासीत् संस्कृतनाटकस्य सिद्धांतपक्षः। सम्प्रति तस्य रचनात्मकः पक्षो

Scanned with CamScanner

-दरिद्रचारुदत्तम्, प्रतिज्ञायौगंधरायणम्, स्वप्नवासवदत्तम्। बालचरितं तावद्भागवताश्रितं मन्यते। परंतु महाभारताश्रितामपि तद्भवितुमर्हति।

परवर्तिनाटककारेषु महीयन्ते कालिदासादयः। महाकविकालिदासो नाट्यकृच्छिरोरत्नभूतस्तिष्ठति यमधिकृत्य सुभाष्तिमिदमुच्यते-

काव्येषु नाटकं रम्य तत्र रम्या शकुंतला।

तत्रापि च चतुर्थोऽकंस्तत्र श्लोकचतुष्टयम्।।

Scanned with CamScanner

स्निग्धश्यामलकान्तिलिप्तवियतो वेल्लद्बलाका घना:
वाता: शीकरिण: पयोदसुहृदामानंदकेका: कला:।
कामं सन्तु दृढं कठोरहृदयो रामोऽस्मि सर्वं सहे
वैदेही तु कथं भविष्यति हहा हादेवि धीरा भव।।

आत्मविषये कविर्नाटकभूमिकायां सम्यगेव वक्ति-

औचित्यं वचसां प्रकृत्यनुगतं सर्वत्र पात्रोचिता
पुष्टि: स्वावसरे रसस्य च कथामार्गं न चातिक्रम:।
शुद्धि: प्रस्तुतसंविधानकविधौ प्रौढिश्च शब्दार्थयो-
र्विद्वभि: परिभाव्यतामवहितैरेतावदेवास्तु न:।।

एते सर्वेऽपि नाटककारा: ख्रिस्तपूर्वचतुर्थशतकादारभ्य षोडशशताब्दं ख्रैस्तं यावत् मध्यावधौ संजाता:।

परवर्तिनो नाट्यकारा: कुलशेखरवर्मा (तपतीसंवरणम्, सुभद्राधनंजयम्) रामचन्द्रसूरि: (नलविलास-राघवाभ्युदय-यादवाभ्युदय-सत्यहरिश्चन्द्रनिभर्यभीमादिकम्) जयसिंहसूरि: (हम्मीरमदमर्दनम्) रविवर्मा (प्रद्युम्नाभ्युदयम्) वामनभट्टबाण: (पार्वती-परिणयम्) युवराजरामवर्मा (रुक्मिणीपरिणयम्) बिल्हण: (कर्णसुंदरी) मथुरादास: (वृषभानुजा) रामभद्रमुनि: (प्रबद्धरौहिणेयम्) यशश्चन्द्र: (मुद्रितकुमुदचन्द्रम्) कृष्णमिश्र: (प्रबोधचन्द्रोदय:) वेदांतदेशिक: (संकल्पसूर्योदय:) यश: पाल: (मोहराजपराजय:) पर-मानन्ददास: कर्णपूर: (चैतन्यचन्द्रोदय:) आनंदरायमखी (जीवानन्दनम्, विद्यापरिणयनम्) नल्लाध्वरी (जीवन्मुक्तकल्याणम्, चित्तवृत्तिकल्याणम्) गोकुलनाथ: (अमृतोदय:) हरिहर: (भर्तृहरिनिर्वेद:) राजचूडामणिदीक्षित: (आनंदराघवम्) सुभट: (दूताअंगदम्) हस्तिमल्ल: (विक्रांतकौरवम्, अंजनापवनंजयम्) क्षेमीश्वर - (चण्डकौशिकम्) प्रभृतयो यद्यपि तत्पूर्ववर्तिन: इव नैव श्लक्ष्णमतयस्तथापि सर्जनापारंगता: परिलक्ष्यन्ते।

भाणकारेषु ईश्वरदत्त: (धूर्तविटसंवाद:) वररुचि: (उभयाभिसारिका) श्यामिलक: (पादप्ताडितकम्) शूद्रक: (पद्मप्राभृतकम्) वामनभट्टबाण: (श्रृंगारभूषणम्) रामभद्रद-ीक्षित: (श्रृंगारतिलकम् अय्याभाणेति ख्यातम्) वरदराजाचार्य: (वसंततिलकम्, अम्माभाणेतिख्यातम्) युवराजकवि: (रससदनभाण:) काशीपति: (मुकुंदानंदभाण:) नल्लाकवि: (श्रृंगारसर्वस्वम्) शंकरकवि: (शारदातिलकम्) एते महीयन्ते।

प्रहसनकारेषु मूद्र्धाभिषिक्तो वर्तते बोधायनकवि: यं विण्टरनित्जमहोदय: ख्रिस्तपूर्वपंचमशताकेत्पन्नं मन्यते। तद्विरचितं भगवदज्जुकीयं विलक्षणप्रहसनं कथा-

Scanned with CamScanner

सौगान्धिकाहरणव्यायोगः, वंकामात्यप्रणीतः वीरराघवव्यायोगः इति।

दशरूपकाणामन्येऽपि भेदाः प्रणीताः कैश्चन। परंतु महता कृच्छ्रेण ते प्राप्यन्ते। प्रयोगदृष्ट्याऽपि न ते लोकप्रियाः।

साम्प्रतिकी संस्कृतरूपकसर्जना-

वस्तुतः एकांकिरूपकाणां युगमिदानीं प्रभवति। तत्रापि प्रहसनान्येव महीयन्ते। साम्प्रतिकी सर्जना 1784 मितख्रिस्ताब्दादनन्तरमेव प्रवर्तते। अयं कालखंडः भारतीयस्–वातन्त्र्यसमरस्य आसीत्। अतएव एतद्युगीनाः कृतयोऽपि स्वातत्र्यवीरान् नायकीकृत्य प्रणीता दृश्यन्ते। मूलशंकरमाणिक्यलालयाज्ञिकः छत्रपतिसाम्राज्यम् प्रतापविजयं, संयोगितास्वयंपरंच प्रणीतवान् (1886) म.म. मथुरानाथदीक्षितोऽपि (1878) भारतविजयं षडअंकनाटकं प्रणिनाय 1937 मितवर्षे यस्मिन् भारतं ब्रिटिशदासतामुक्तं प्रदर्शितवान्।

Scanned with CamScanner

एव। प्रो. राधावल्लभस्तत्प्रणीतम् इन्द्रजालम् (चतुष्पथीयम्) सस्कृतस्य प्रथम कोणनाट्य (नुक्कड.नाटक) मनुते।

नाट्यनवार्णवं वर्तते कोणनाट्यसंकलनमाद्यन्तम्। तस्य लक्षणं स्वयं प्रस्तौति रचनाकारः-

नासोपमे लघुक्षेत्रे संकार्णेऽनायते क्वचित्।
नरैः प्रदर्शितं नाट्यं नासिक्यमभिधीयते।।
संवादबहुलं प्रायः प्रत्यग्रवृत्तसंश्रितम्।
साधिक्षेपंच सव्यंग्यं हास्मुख्यं समन्ततः।।
सम्भवन्ति रसाश्चान्ये यथावृत्तं यथानटम्।

Scanned with CamScanner

यजुर्वेदात् अभिनयतत्त्वं, अथर्ववेदाच्च रसतत्त्वमादाय नूतनमिदं नाट्यं रचयांचकार।

रचनानन्तरमेव महेन्द्रविजयस्य मंचप्रस्तुतिरपि कृता भरतेन। तत्र दानवानामुपरि देवानां विजयं दृष्ट्वाऽसुराः क्रुद्धाः जाताः। ते विघ्नान् उत्पादयामासुः। इन्द्रश्च ध्वजदंडमेव प्रहरणीकृत्य तान् जर्जरानकरोत्। पश्चाच्च भगवान् प्रजापतिः उभावपि वर्गौ समाहूय, नाट्यस्य प्रकृतिं विशदयांचकार, असुरांश्च यथाकथंचित्तोषयामास।

तृतीयचरणे वेधस आज्ञया विश्वकर्मा नाट्यमण्डपं त्रिविधं चतुर्रत्र्यस्त्रविकृष्टसंज्ञं निर्मितवान्। तत्रापि प्रयोगदृष्ट्या विकृष्टमध्यमकोटिकं मण्डपं सर्वश्रेष्ठमुद्घुष्टम्। तस्य नाट्यमण्डपस्य दारुकमर्3-सुधाकर्म-चित्रकर्म-निर्यूहादिरचनाकर्म चापि सविस्तरं वर्णितं वर्तते नाट्यशास्त्रे।

एतत्सर्वं सम्पाद्यैव पुत्रैः सार्धं भरतः समुद्रमंथननाम समवकारं प्रयुक्तवान्। ततश्च कैलाशशिखरं गत्वा त्रिपुरदाहाख्यं डिमंचाभिनीतवान् रुद्रसमक्षम्। सर्वेऽपि देवा ऋषयः प्रसंताः जाताः। परंतु नाट्ये कैशिकीमपि मेलयितुं शिवः परामृष्टवान्। तन्निर्देशं स्वीकृत्य ब्रह्मा कैशिकीसामग्रीं भरताय दत्तवान्-मंजुकेशीप्रभृतीश्चतुर्विंशतिदेवनर्तकीः गानभाण्डार्थं च स्वातिं नारदम्। सम्प्रति भरतप्रणीतं नाट्यं सर्वदृष्ट्या सम्पन्नं जातम्।

तदेव नाट्यं महाराजोः महुषः स्वर्गलोकात् भूतलमानिनायेति कथा नाट्यशास्त्रे वर्णिताऽस्ति। एवं हि नाट्यं देवा सुरऋषिमहर्षिमानवादीनां समेषां समन्वितं मनोरंजन-साधनम्। नाट्यमंचे प्रतिपदं देवानां प्रतिष्ठापना क्रियते। यतो हि रंगदैवतपूजनं विना प्रयोगो न कथमपि प्रवर्तते प्रवृत्तश्चापि अनिष्टकरो जायते। एवं हि भारतीयनाट्यप्रयोगः चाक्षुषयज्ञकल्पः स्वीक्रियते, न तावत् नयनानंदासेचनकं मनारंजनमात्रम्।

तत्सर्वं नाट्यमाहात्म्यं सविस्तरमत्र निरुपितं वर्तते निबंधेस्मिन्। नाट्ये चतुर्विधोऽ-भिनयः, चतस्रो नाट्यवृत्तयः, दृश्यानि च लोकधर्म-नाट्यधार्माश्रितानि, दशरूपकभेदा, उपरूपकाणि इति सर्वमपि निबंधेऽस्मिन् संक्षेपतो वर्णितम्। ततश्चार्वाचीनं नाट्यवाङ्-मयमपि पाठकानां परिज्ञानाय, संकलव्य प्रस्तुतम्।

भासः

भासस्य त्रयोदशनाटकानि उपलभ्यन्ते । १९०९ क्रिस्ताब्दौ त्रिवेन्द्रम् निवासी महामहोपाध्यायरू टी० गणपतिशास्त्रीमहोदयः तिरुवाङ्कोर राज्यात् तालपत्रलिखितानि एतानि प्राप्तवान् । तेषां नाटकानाम् नामानि सन्ति अधोलिखितानि। एतेषां त्रयोदशानामपि नाटकानां कर्ता भास इति लब्धयशसः टिण्गणपतिशास्त्रिणः निरणयन् । प्राचीनः नोन-

Scanned with CamScanner

भास तस्य ग्रन्थाणा वाक्यानि च समुदाहरन् । अपि च एतानि सर्वाण्यपि नाटकानि एकत्रैव प्राप्तानि । अतः एतानि सर्वाण्यपि रूपकाणि प्रायशः भासकृतानीति विद्वद्भिः सिद्धान्तित-मस्ति । किन्तु एतस्मिन् विषये ऐकमत्यं न सिद्धम् । इमं कविं महाकविः कालिदासः मालविकाग्निमित्रम्इति नामके स्वस्य नाटके ष्प्रथितयशसां भाससौमिल्लकविपुत्रादीनां प्रबन्धानतिक्रम्य वर्तमानकवेः क्रियायां कथं परिषदो बहुमानःघ्ष् इति सबहुमानं भासम् अश्लाघत । बाणोऽपि स्वकाव्ये हर्षचरितम् नाम्नि काव्ये ष्सूत्रधारकृतारम्भैः नाटवै-र्बहुभूमिकैः । सपताकैर्यशो लेभे भासो देवकुलैरिवष् इति भासकविम् अस्तौत् । कविः राजशेखरः अपि भासो रामिलसोमिलौइतिए ष्भासो हासःष् इति जयदेवःमुरारिश्च भासम् अस्तुवन् ।

भासस्य कालः

अनेके कवयः भासं प्राशंसन् । काव्यशास्त्रकाराः भासकृतान् श्लोकान् स्वग्रन्-थेषु समुदाहरन् । एतेन ज्ञायते यत् भासः कालिदासादपि प्राक्तनः तदर्वाचीनकवीनाम् आत्मीयश्च स्यादिति । अनेकेषां कवीनाम् यथा तथैव भासस्यापि देश.कालयोः विषये कोऽपि निश्चयः नास्ति । तथापि विमर्शकानाम् अभिप्रायानुसारं क्रिण्पूण्१थमे शतमाने भास आसीदिति निर्णेतुं शक्यते । शार्ङधरपद्धतिः, सूक्तिमुक्तावलिः, सदुक्तकर्णामृतम्ए सुभाषितावलिःए इत्यादिषु प्राचीनेषु सुभाषितग्रन्थेषु भासाङ्कितानि पद्यानि लभ्यन्ते । एतादृशानि सर्वाणि साक्ष्याणि उद्धृत्य भासः क्रिस्तात् पूर्वं सप्तमे शतके आसीदित्यपि विमर्शकाः निर्णीतवन्तः । केचन विपश्चितः भासः क्रिण्शण्२तीये शतके आसीदित्यपि अभिप्रयन्ति । गते शतके समुपलब्धम् यज्ञफलम् नाम रामायणकथावस्तु नाटकमपि भासकविकृतमेवेति तस्य अध्येतारः दोषज्ञाः निरचिन्वन् । भासस्य देशविषयेए मातापित्रोः विचारे च कापि कथा नोपलभ्यते । अयं दाक्षिणात्यः इति केचन साधारं प्रतिपादयन्ति ।

भासस्य रुपकाणि

प्रतिज्ञायौगन्धरायणस्वप्नवासवदत्ताऽविमारकाणि त्रीणि बृहत्कथाऽऽधाराणि ।

Scanned with CamScanner

२. दूतघटोत्कच दृहाडम्बाभामयारात्मजस्य घटात्कचस्य महाभारताय चारतम् ।

३. कर्णभारे दृकर्णस्योदात्तं चरितम्ए तेन हीन्द्राय कवचकुण्डले दत्ते ।

४. ऊरुभङ्गे दृभीमेन प्रियापरिभवप्रतप्तेन दुर्योधनस्य जङ्घे भग्ने । संस्कृतसाहित्ये शोकान्तनाटकस्येदमेकं निदर्शनम् ।

५.दूतवाक्ये दृदूतभूतस्य श्रीकृष्णस्य सदाशयतया सहैव दुर्योधनस्याभिमानित्वं वर्णितम् ।

६. पञ्चरात्रे दृकल्पिता कथा । द्रोणेन कौरवाणां यज्ञे आचार्यकत्वं कृतम्ए दक्षिणायां स पाण्डवानां राज्यं याचितवान् ।

पञ्चदिनाभ्यन्तरेऽन्वेषणेक्रियमाणे लभ्यं तदिति दुर्योधनस्याश्वासने द्रोणेन तथा कृतम्।

७.बालचरिते दृकृष्णस्य बाललीला भागवताधारेणा कृता ।

८.अविमारके दृया कथा सा सम्भवतो गुणाढ्यकृतबृहत्कथातो गृहीता राजकुमारस्याविमारकस्य कुन्तिभोजकुमार्या कुरङ्ग्या सह प्रणयोऽत्र वर्णित: ।

९. प्रतिज्ञायौगन्धरायणे दृ मन्त्री यौगन्धरायणं पद्मावत्या मगधराजभगिन्या सहाेदयनस्य विवाहं कारयित्वा राजशक्तिं वर्ध्दयिउमैच्छत् । ध्रियमाणायां च वासवदत्तायां न सम्भवतीदमिति कदाचिदुदयने मृगयार्थं गते मन्त्रिसम्मत्या वासवदत्ता दग्धेति प्रचार्यते । राज्ञा चिरं विषद्यापि न तत्प्रेमणि मालिन्यमानीयते पश्छात् पदमावत्यां परिणीतायां स्वप्नक्रमेणैव वासवदत्ता लभ्यते ।

१०. दरिद्रचारुदत्ते.वसन्तसेनाचारुदत्तयो: प्रणयकथा वर्णिता । अस्य चत्वार एवाङ्का उपलभ्यन्ते ।

Scanned with CamScanner

७. अप्रधानपात्राणां नामसाम्यम्ए व्याकरणलक्षणहीनप्रयोगप्राचुयम् समाः वाक्यम्ए सर्वत्र बाहुल्येन लभ्यते ।

८. भरतकृतनाट्यशास्त्रीयनियमानां सर्वत्र समभावेनानादरः ।

९. नाट्यनिर्देशस्य अभावः समानः ।

१०. एषां सर्वेषां रुपकाणां नामानि केवलमन्त एव ग्रन्थस्य लभ्यन्ते नान्यत्र क्वापि ।

भासस्य द्विरवतारः

यद्यपि बहवो विद्वांसो गुणपतिशास्त्रिणा प्रकाशितानि सर्वाण्यपि रुपकाणि प्रचीनभ्-ासकृतानीत्युक्तवन्तः प्रमाणानि चोपस्थापितवन्तःए परन्तुजातेन बहुविधानुसन्धानेनेषां कर्त्ता प्राचीनो भासो न सिद्धयतिए यतो भासकृतत्वेनोदाहृतानि पद्यानि लभ्यमानग्रन्थेषु नासाद्यन्तेए अतः सर्वाण्यपीमानि रुपवाणि केरलदेशीयेन केनचित् कविना कृतानीति

Scanned with CamScanner

कथास्तयैवोपन्यस्यापि केवलेन सरलत्वकथनोपकथनचातुर्यादियोजनेन तानि स्मवीयतां प्रापयतीति भासस्य नाटकनिर्माणनैपुण्यं सुखमवगन्तुं शक्यम् ।

भासकृतिभिरन्यकविकृतिसाम्यम्

भासस्य कृतयोऽन्येषां कृतिभिः सह साम्यं बिभ्रति । यथा शाकुन्तले चतुर्थोऽङ्के वृक्षलतादीन् प्रति शकुन्तलाया यः कोमलो मनोभावः दृष्पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु य इत्यादिना वर्णितस्तत्तुल्य एव भासस्याभिषेके ष्यस्यां न प्रियमण्डनापि महिषी देवस्यमन्दोदरीष् इत्यादौ मनोभावो वर्ण्यते । यथा शाकुन्तले आश्रमवासिनां पीडनं परिहर्तुमादिश्यते तथैव स्वप्नवासवदत्ते दृ ष्न परुषमाश्रमवासिषु प्रयोज्यम् ष् इत्यादिश्य

Scanned with CamScanner

शृङ्गारे ललितोद्गारे कालिदासत्रयी किमु ।

केचित्त्वत्रत्य 'कालिदासत्रयी' पदस्य काव्यत्रये निरूढमर्थं गृह्णन्ति भक्त्या न तु कवीनां त्रयीति । अपरे तु मुख्यमेवार्थं समाधृत्य राजशेखरसमये एव कालिदासाभिधास्त्रय: कवय: प्रसिद्धा: आसन्निति मन्यन्ते । ग्रन्थानां कालिदासप्रणीतत्वेन प्रसिद्धानामाभ्यन्तरपरीक्षणेन तु श्लोकेनानेन कवीनां त्रय्येव सङ्केतिता सम्भवति इति मन्यते। श्रव्यकाव्येष्वपि रघुवंशकुमारसम्भवमेघदत-ऋतुसंहाराणां परस्परं रचनावैशिष्ट्यं नैकप्रणीतत्वं समर्थयति । मेघदूते हि -

वक्र: पन्था यदपि भवत: प्रस्थितस्योत्तरस्यां

सौधोत्सङ्गप्रणयविमुखो मा स्म भूरुज्जयिन्या: ।

विद्युद्दामस्फुरितचकितैर्यत्र पौराङ्गनानां

लोलापाङ्गैर्यदि न रमसे लोचनैर्वञ्चितोऽसि ।।

इति सर्वातिशायित्वेन स्मृता उज्जयिनी रघुवंश-कुमारसम्भवयो: नाम्नाऽपि न स्मर्यते । कुमारसम्भवस्य कर्ता हिमालयस्य केदारकूर्माचलखण्डयोरेव रमते । रघुवंशस्य प्रणेता तु चतुर्थषष्ठसर्गयो: भरतवर्षमेव भ्रमति । ऋतुसंहारस्य कर्ता पर्वतीयमेव ऋतुपरिवर्तनं विवृणोति । विषयप्रतिपादनदृष्ट्याऽपि तेषां सर्वेषामेवैककर्तृकत्वं नैव सिध्यति । तेषु तेषु हि भौगोलिकवर्णनमपि मिथो न संवदते । एवमेव स्थितिकालदृष्ट्याऽपि तत्र सामञ्जस्यं नैव सिध्यति । मालविकाग्निमित्रस्य प्रणेता अग्निमित्रं हि पुष्यमित्रस्य पुत्रं विदिशे नायकत्वेन गृह्णाति । विक्रमोर्वशीये तु कश्चिदपर एव विक्रमाख्यो नायक: । रघुवंशस्य कर्ता मगधं हि सर्वोत्कृष्टराज्यत्वेन स्मरति यतो हि स रघो: दिग्विजयप्रसङ्गे मगधं नाम्नाऽपि न स्मरति किन्तु षष्ठसर्गे स्वयंवरप्रसङ्गे परन्तपाख्यस्य मगधराजस्य तत्रोपस्थितिं कथयति । यथा हि तत्रोक्तम् -

कामं नृपा: सन्तु सहस्रशोऽन्ये राजन्वतीमाहुरनेन भूमिम् ।

नक्षत्रताराग्रहसङ्कुलाऽपि ज्योतिष्मती चन्द्रमसैव रात्रि: ।।

इति।

ऋतुसंहारस्य कर्ता हि विन्ध्योपकण्ठं साधु वर्णयति यदा कुमारसम्भवस्य प्रणेता तु गन्धमादनं साधु जानाति । तथैव रघुवंशे हि मालवसाम्राज्यसमसामयिकी भौगोलिकस्थिति: वर्णिताऽस्ति । मघदूतस्य कर्ता तु उज्जयिनीं विशेषेण स्तौति । सम्प्रति कालिदासकृतित्वेन ख्यातेषु त्रिषु रूपकेषु तावत्स्वेव श्रव्यकाव्येषु ऋतुसंहारोत्तरेषु च

Scanned with CamScanner

काग्निमित्र-ऋतुसंहारयोश्च साम्यं समर्थयन्ति पण्डिताः, किन्तु समुद्रगुप्तप्रणीतकृष्णचरितं तु दृश्यकाव्यानां कालिदासाभिधकाव्यकारकतृत्वं श्रव्यकाव्यानां तु हरिषेणस्य कालिदासविशेषणस्य कृतित्वं समर्थयति । यथोक्तं तत्र -

पुरन्दरबलो विप्रः शूद्रकः शास्त्रशस्त्रजित् ।
धनुर्वेदं चौरशास्त्रं रूपके द्वे तथाऽकरोत्।।
तत्कथां कृतवन्तौ तौ कवी रामिलसौमिलौ ।
तस्यैव सदसि स्थित्वा तौ मानं बहु चाप्तताम् ।।
सतां मतः सोऽश्वमेधं कृतवानुरुविक्रमः ।
वत्सरं स्वं शकान् जित्वा प्रावर्तयत वैक्रमम् ।।
तस्याऽभवन्नरपतेः कविसप्तवर्णः
श्रीकालिदास इति योऽप्रतिमप्रभावः ।।
दुष्यन्तभूपतिकथां प्रणयप्रतिष्ठां
रम्याभिनेयभरितां सरसाञ्चकार।।
शाकुन्तलेन स कविर्नाटकेनाप्तवान् यशः ।
वस्तुरम्यं दर्शयन्ति त्रीण्यन्यानि लघूनि च।।
भूयः स मृच्छकटिकं नवाङ्कं नाटकं व्यधात् ।
व्यधात्तस्मिन् स्वचरितं विद्यानयबलोजितम् ।।

अत्रान्येषु त्रिषु विक्रमोर्वशीयं मालविकाग्निमित्रमिति द्वे तु ज्ञाते तृतीयं सम्प्रति नैवोपलभ्यत इति युधिष्ठिरमीमांसकमतम् । एवमेव -

काव्येन सोऽद्य रघुकार इति प्रसिद्धो
यः कालिदास इति महार्हनामा।
प्रामाण्यमाप्तवचनस्य च तस्य धर्म्ये
ब्रह्मत्वमध्वरविधौ मम सर्वदेव।।
चत्वार्यन्यानि काव्यानि व्यदधाच्च लघूनि यः।
प्राभावयच्च मां कर्तुं कृष्णस्य चरितं शुभम्।।
हरिषणकविर्वाग्मी शास्त्रशस्त्रविचक्षणः।

Scanned with CamScanner

३२ - खाद्यटपाकिकस्य महादण्डनायकध्रुवभूतिपुत्रस्य सान्धिविग्राहिक-कुमारा-मात्यमहादण्डनायकहरिषेणस्य सर्वभूतहितसुखायास्तु।

३३ - अनुष्ठितञ्च परमभट्टारकपादानुध्यातेन महादण्डनायकतिलभट्टकेन।

इति।

हरिषेणो हि चन्द्रगुप्तस्य मन्त्रिणः शिखरस्वामिनः पौत्रः कुमारगुप्तस्य मन्त्रिणः पृथिवीषेणस्य पुत्र आसीदित्यपि कुमारगुप्तस्य कर्मदण्डशिलास्तम्भाभिलेखस्य षष्ठस-प्तमपङ्क्तितो ज्ञायते।

मन्यते यत्, अभिज्ञानशाकुन्तलादिरूपकाणां प्रणेता कविः परमशैवः किन्तु रघुवंशप्रणेता तु मङ्गलाचरणे पार्वती शङ्करौ स्तुवन्नपि विष्णोः प्राधान्यसमर्थको भागवतः । राजकविवर्णनप्रसंगे समुद्रगुप्तस्य कृष्णचरिते कविवर्णनक्रमेऽपि कालिदासोऽश्वघ-ोषात्पूर्वमेवोपस्थापितोऽस्ति । अश्वघोषस्य कनिष्कसभासत्त्वं चतुर्थसौगतमहासंसदि भागग्रहणञ्च तत्रैवोक्तम् । यथोक्तं तत्र -

सौगतानां महासंसत् तुरीयाऽभून्महोज्ज्वला ।

तस्यां सभ्यो बभूवायं विश्वविद्वच्छिरोमणिः।। इति ।

इत्थं हि कालिदासस्य चत्वारि स्वरूपाणि चिन्त्यन्ते अभिज्ञानशाकुन्तलकुमारसम्भ-वयोः प्रणेतकः, विक्रमोर्वशीयरघुवंशयोः रचयिताऽपरः, मालविकाग्निमित्र-ऋतुसंहारयोः कर्ता तृतीयः, मेघदूतस्य प्रणेता चतुर्थ इति ।आद्यो हि केदारखण्डीयः, द्वितीयस्तु मागधः, तृतीयो वैन्ध्यः, चतुर्थस्त्वावन्तिकः । एकतो हि यदा कुमारसम्भवकृतं हिमालयस्य यथार्थवर्णनं कवेः पर्वतीयत्वं घुष्णाति, अपरतस्तु तदैव ऋतुसंहारोपवर्णितं ग्रीष्मवर्णनं स्पष्टमेव विन्ध्यवासित्वं कवेः सूचयति ।युधिष्ठिरमीमांसकस्य मते कालिदासप्रणीतत्वेन

Scanned with CamScanner

सागरमुद्रणालयप्रकाशितायाः प्रथमे गुच्छके श्यामलादण्डकस्य पादसूच्या (अष्टमे पृष्ठे) दुर्गाप्रसादः कथयति -

राजशेखरात्पूर्वं त्रयः कालिदासाः समुत्पन्नाः । ते च कस्मिन् कस्मिन् देशे काले च प्रादुरभुन्निति न ज्ञायते । अकबरीयकालिदासस्तु चतुर्थोऽर्ववाचीनः । राजशेखरस्तु ख्रीस्तसंवत्सरस्य दशमे शतके समुत्पन्नः इति ।

कालिदासस्य जीवनदर्शनम्

कालिदासो हि परम्परासमर्थको भारतीय आसीद्,यो हि सनातने धर्मे मनागपि परिवर्तनं वोपेक्षणं नैव सहते। तेनैव सोऽभिज्ञानशाकुन्तलस्य मङ्गलाचरणपद्ये बौद्धसम्मतनिरीश्वरवादनिरासाय 'प्रत्यक्षाभिः प्रपन्नस्तनूभिः' इति कथयति । स हि त्रयीसम्मतं चातुर्वर्ण्यं चातुराश्रम्यञ्चेत्थं समर्थयति -

शैशवेऽभ्यस्तविद्यानां यौवने विषयैषिणाम्।

वार्धके मुनिवृत्तीनां योगेनान्ते तनुत्यजाम्।।

मुनिवनतरुच्छायां देव्या तया सह शिश्रिये।

गलितवयसामिक्ष्वाकूणामिदं हि कुलव्रतम्।।

न हि सति कुलधुर्ये सूर्यवंश्या गृहाय ।

तदनुसारेण पुरुषार्थचतुष्टयसिद्धिरेव जीवनस्य लक्ष्यम् । तत्रापि अर्थकामाभ्यां धर्मपरकाभ्यां भाव्यं यतो मोक्षसिद्धिः सम्पद्यते । तेनैव तस्य दुष्यन्तः प्रथमं विप्रकन्यां

Scanned with CamScanner

दुष्यन्त उद्घोषयति -

सतां हि सन्देहपदेषु वस्तुषु प्रमाणमन्तःकरणप्रवृत्तयः ।

तथैव शम्भुनोपेक्षिताऽपि पार्वती -

इयेष सा कर्तुमबन्ध्यरूपतां समाधिमास्थाय तपोभिरात्मनः।

अवाप्यते वा कथमन्यथा द्वयं तथाविधं प्रेम पतिश्च तादृशः।।

उपायेनाशक्यं न किमपि सम्भवतीति तस्य प्रबलो राद्धान्तः । तस्य हि सर्वाण्यपि पात्राणि तथैवाचरन्ति । स हि मर्यादाकविः । स्वसम्मतां मर्यादां स कदापि नैवोल्लङ्घयति। तस्य हि मर्यादोल्लङ्घनमपि मर्यादास्थापनायैव भवति । यथोक्तम् -

नृपतेः प्रतिसिद्धमेव तत् कृतवान् पङ्क्तिरथो विलङ्घ्य यद् ।

अपथे पदमर्पयन्ति हि श्रुतवन्तोऽपि रजोनिमीलिताः।।

स हि परमार्थतो माहेश्वरः सम्मतः । स प्रायः सर्वास्वेव कृतिषु महेश्वरभवीष्टदेवत्वेन स्तौति । किन्तु नैतावतेतच्चिन्तनीयं यत्सोऽन्यदेवेषु न तथा बद्धादर इति । स तु देवत्रयस्यैकान्तैक्यं समर्थयति । यथा मङ्गलपद्ये शिवः कुमारसम्भवे (२ सर्गे) ब्रह्मा, रघुवंशे (१० सर्गे), विष्णुश्च स्तुताः सन्ति । प्रत्यभिज्ञावादी स साङ्ख्ययोगावपि तथैवाद्रियते । वेदेषु परमश्रद्धा, पुनर्जन्मवादः, ईश्वरस्य जगत्प्रणेतृत्वञ्च कालिदासस्य जीवनदर्शनस्य केचित्पक्षाः । स हि सन्दिशति -

'त्यागाय सम्भृतार्थानां सत्याय मितभाषिणाम्।

यशसे विजिगीषूणां प्रजायै

गृहमेधिनाम्।।

इति।

कवेः देशः

कालिदासस्य जीवनवृत्तिविषये अनेकाः लोकविश्रुतयः अनेके वादाः च सन्ति । केचित् एनं विक्रमादित्यस्य सभायां कविः इति मन्यन्ते । केचित् गुप्तकालीननरेशाणाम् आश्रयं प्राप्तवानिति कथयन्ति । धारानगरे भोजराजस्य सभायां कविरत्नपदभूषितः अभूत् इति कथाकोविदाः कथयन्ति। जनश्रुत्यनुसारं बाल्यकाले सः अतीव मूर्खः आसीत् । विद्याधरया सह तस्य विवाहः अभवत् । मूर्खः पतिः इति ज्ञात्वा विद्याधरा तं कालीदेव्याः आलयं नीत्वा यावत् सा भवते विद्यां न उपदिशति तावत् भवता ततः बहिः न आगन्तव्यम् इति आदिशत् । ततः पत्न्याः कथनानुसारेण तथैव आचरितः कालिदासः कालीदेव्याः

Scanned with CamScanner

वरप्रसादेन विद्वान् अभवत् इति । इयं कथा कालिदासस्य प्रतिभया कविताचातुर्येण च जाता तथ्या तु न इति विदुषां मतिः । यतः जानकीहरणस्य कर्ता राजाकुमारदासः च सप्तमे शतके आस्ताम् इति विद्वांसः निश्चितवन्तः । अतः अयं तस्मिन् काले नासीत् इति वक्तुं शक्यते । इतोऽपि कालिदासस्य कविताचातुर्यं निर्दिश्यमानाः अनेकाः कथाः सन्ति ।

1.उत्तररामचरितस्य कर्ता भवभूतिः स्वयं नाटकं विलिख्य कालिदासस्य अभिप्रायं प्रष्टुं गतः आसीत् । समग्रं नाटकं परिशील्य पठित्वा च कालिदासः नाटकस्य प्रथमाङ्के विद्यमाने –

किमपि किमपि मन्दं मन्दमासत्तियोगा-

दविरलितकपोलं जल्पतोरक्रमेण ।

अशिथिलपरिरम्भव्यापृतेकैकदोष्णो-

रविदितगतयामा रात्रिरेवं व्यरंसीत् ।।

श्लोकेऽस्मिन् 'रात्रिरेवं' इत्यत्र रात्रिरेव इत्येव सूक्तमिति परिष्कारम् अकरोत् । भवभूतिना लिखिते श्लोके एवं रसमयार्थः यथा द्योत्येत तथा परिष्कारं कृतवानिति अत्र कालिदासस्य काव्यप्रतिभां सहृदयाः श्लाघितवन्तः चेदपि भवभूतिकालिदासौ समकालीनौ आस्ताम् इत्येतं विषयं ऐतिहासिकाः नाङ्गीकुर्वन्ति ।

२. अपरा काचित् कथा एवं श्रूयते यत् कदाचित् सरस्वती देवी कालिदासभवभूत्योः कवितागुणतारतम्यं परीक्षितुं तुलायां द्वयोः स्थाल्योः उभौ अपि स्थापितवती इति । तदा भवभूतेः स्थाल्याः भारः न्यूनः अभवदिति सरस्वती स्वस्य कर्णे धृतं कल्हारमुकुलमकरन्दं तत्र योजितवती इति । तस्मात् द्वे स्थाल्यौ अपि समाने जाते इति श्रूयते । कालिदासस्य कविताचातुर्यं परिश्लाघ्यमानानि अनेकानि उपाख्यानानि 'भोजप्रबन्ध'इत्यस्यां कृतौ परिदृश्यते । परन्तु तानि सर्वाणि प्रमाणभूतानि इति वदितुं न शक्यते ।

३. विक्रमसंवत्सरस्थापकस्य विक्रमादित्यस्य आस्थाने नवरत्नेषु अयमपि अन्यतमः इति परम्परागतः अपरः विश्वासः । यथा –

धन्वन्तरि-क्षपणकामरसिंह-शङ्कुवेतालभट्ट-घटकर्परकालिदासाः ।

Scanned with CamScanner

गवेषकाणाम् एक: एव निष्कर्ष: अद्यावधि समुपलभ्यते यत् पुरातना: कवय: स्वनिर्वचनं नैव कुर्वन्ति स्म इति । पाठकानां सामाजिकानां गवेषकाणां च प्रश्न: भवति बलवान् येन प्रेरिता: ते एतादृशान् ऐतिहासिकान् विषयान् कौतूहलेन गवेषयन्ति । गवेषणाया: सिद्धान्ता: प्रकाराणि च विभिन्नानि दृश्यन्ते । अस्य जीवनविषये बह्व्य: दन्तकथा:, ऐतिहासिककथा: च सन्ति । मेघदूते अन्यासु कृतिषु स: पुन:पुन: उज्जयिन्या: सौन्दर्यं वर्णितवान् अत: स: तत्रैव बहुकालम् उषितवान् स्यात् । काश्मीरे प्रवर्धमानस्य केसरपुष्पं स: केवलं वर्णितवान् इत्यत: काश्मीरीय: स्यादिति केषाञ्चित् अभिप्राय: । तेन मेघदूते निर्दिष्ट: रामगिरि: विदर्भे अस्ति । तत्रत्यानि असनवसनादिविषयान् स: वर्णयति इत्यत: विदर्भीय: स्यादिति, न समीचीनं निर्णयं लभते । मालवं विस्तरेण वर्णितवान् इत्यत: स: मालवीय: अस्तीति पुनश्च केषाञ्चित् अभिप्राय: । रघुवंशमहाकाव्ये तेन वर्णितं रघो: दिग्विजयं सूक्ष्मतया परिशीलयामश्चेत् भारते तस्य अपरिचित: प्रदेश: नास्तीति स्पष्टं ज्ञायते । यथा असमप्रदेशम् अवर्णयत् तथैव मनोहरशैल्या केरलमपि अवर्णयत् । हिमालयमिव समुद्रतीरमपि सुन्दरम् अवर्णयत् । अत: स: राष्ट्रकवि:, उज्जयिनी तस्य स्थिरस्थानम्, समग्रभारतं तस्य चरस्थानम्, अत: समग्रभारतमेव तस्य प्रदेश: इत्यपि वक्तुं शक्यते । एतदीयमातापित्रो: नामनी अद्यापि नोपलभ्येते न वा अयमेव सम्यक्तया निर्णयो जात: यदयं कुत्रत्य: इति । अस्य काव्यनाटकेषु आसमुद्रं भूस्थानानि वर्णितानि सन्ति । अस्य देश: काश्मीर इति, बङ्गाल इति, गालव इति च विभिन्ना: वा वादा: मण्डिता: बुधै: । यद्यपि कालिदासत्रयीति समालोचकपरम्परया अवबुध्यते तथापि संस्कृतसाहितीपरिचितानां मन:सु स: अन्यतम: कालिदास: । यदियं काव्यत्रयं नाटकत्रयं च जगन्मोहयति । आवर्जयति च हठात् पाश्चात्त्यविदुषामपि मनांसि ।

व्यक्तित्वम्

नूनमयं शैव: इति हेतो: मेघदूतकृतम् उज्जयिनीस्थमहाकालवर्णनं तत्रत्या: भौगोलिकीस्थिते: तत्सम्बद्धं चित्रणं निरीक्ष्य बहव: विद्वांस: अयम् उज्जयिनी निवासी इति विश्वसन्ति । इत्थं परिचयशून्योऽपि सर्वपरिचित: महाकविरयं सर्वासु दिक्षु स्वकीयम्

Scanned with CamScanner

कालिदासस्य काव्येषु वयं भारतसंस्कृतिदर्शनं पश्यामः ।

तेन चित्रिताः नायकाः प्रेमपाशे संलग्नाः चेदपि सभ्यतायाः सीमां न अतिक्रामन्ते स्म । नायकाः दाक्षिण्यपराः, धर्मनिष्ठाः आसन् इति कवेः चित्रणं तस्य मनोधर्मं सूचयति । कालिदासः बालेषु नितरां स्निह्यति स्म इति बहुत्र व्यक्तः भवति । मित्राणि परिवाराः, भृत्याः, अतिथि-अभ्यागताः, तपस्विनः इत्यादिभिः नायकैः आचर्यमाणया रीत्या कवेः कुटुम्बदृष्टिं सामाजिकदृष्टिं ज्ञातुं शक्नुमः । तस्य नाटके आदौ क्रियमाणानि तेन लिखितानि सम्भाषणानि तस्य विद्वद्विनयं व्यनक्ति । अभिज्ञानशाकुन्तलस्य अन्तिमभागे परमेश्वरेण पुनर्जन्मराहित्या मुक्तिः दीयताम् इति तेन कृता प्रार्थना कालिदासः तृप्तिकरं परिपूर्णं जीवनं कृत्वा भगवति मुक्तिमपेक्ष्यमाणः अस्तीति अवगम्यते ।

कालः

आभारतीया भारतीया वा कविवरमिमं नवीनतमं प्राचीनतमं वा कल्पयन्तु नाम, किन्तु अस्य कृतिभिः एतस्य स्थायि यशः न मनागपि ह्रीयते । अस्य कालविषये तु प्राधान्येन । 1 तत्र प्रथमं क्रिस्ताब्दतः पूर्वं प्रथमशताब्द्याम् । 2. द्वितीयं क्रिस्ताब्दतः पश्चात् पञ्चमशताब्द्याम् । 3 तृतीयं क्रिस्ताब्दतः पश्चात् षष्ठशताब्द्याम् । प्रथममतस्य समर्थकाः प्रायः सर्वेऽपि विद्वांसः सन्ति । तेषां कथनमिदम् अस्ति यत् कालिदासः राज्ञः विक्रमादित्यस्य आस्थाने नवविद्वन्मणिषु आसीत् अन्यतमः । यथा - मालविकाग्निमित्रस्य कथांशेन परिज्ञायते यत् कालिदासः शुङ्गवंशस्य अभिज्ञः इति । कालिदासस्य काव्यरचनाप्रणाली सुतरां स्वाभाविकी सत्यपि महाभाष्यम् अनुकरोति । प्रवृत्तिरियं

Scanned with CamScanner

स्थितं तत्पुत्रमग्निमित्रं नाटके नायकीकरोतीति परं प्रमाणं तस्य तत्समकालिकत्वस्य । अग्निमित्रो हि तदा पित्रा कृतवैरो विदिशापालक आसीदिति।

सोऽहमिदानीमंशुमता सगरपुत्रेणेव प्रत्याहृताश्वो यक्ष्ये । तदिदानीमकालहीनं विगतरोषचेतसा भवता वधूजनेन सह यज्ञसेवनायागन्तव्यमिति कथनेन ज्ञायते । तत्र हि सम्राट् पुष्यमित्रस्तत्कालप्रचलितेन सेनापतिशब्देन प्रतिज्ञातोऽपि दृश्यते । यथोक्तं -

ठस्वस्ति । यज्ञशरणात् सेनापतिः पुष्यमित्रो वैदिशस्थं पुत्रमायुष्यन्तमग्निमित्रं स्नेहापरिष्वज्येदमनुदर्शयतिऽऽऽऽइति ।ठ ठअदिघोरे क्खु पुत भो सेनावदिणा णिउत्तो'' इत्यपि ।

पुष्यमित्रो हि प्रथमं मौर्यस्य देवभूतेः सेनापतिरासीत् । स हि तं हत्वा स्वयमेव राज्यं बुभुजे । तेन हि स तदा सेनापतिशब्देनैव ज्ञातो व्यवहृतश्चासीत् । स हि नीचगिरौ शिलावेश्ममात्राणि जानाति । तथैव स विदिशा दशार्णानां राजधानीत्वेन स्मरति, यद्धि शुङ्गकाले एवाऽऽसीत् । स हि शुङ्गवंशीयं त्रैपुरुषिकं जानाति । यदि नाम कालिदासः शुङ्गशासनानन्तरकालिकः स्यात्तदा स तथाविधमनतिप्रसिद्धं युवराजमग्निमित्रं नैव नायकीकुर्यात् । किन्तु पक्षस्यास्य सिद्धाववि सन्त्यनेका विप्रतिपत्तयः। कालिदासो हि रघुवंशे षष्ठसर्गे इन्दुमतीस्वयंवरप्रसङ्गे राजवर्णनक्रमे प्रथमं मगधेश्वरमेव गृह्णाति वर्णयति च तदुत्कर्षं यथा स मागध एव स्यात्, किन्तु तत्सम्मतः परन्तपो नाम मागधो राजा न कुत्रापि पुराणेष्वपि श्रुयते । रघुवंशे एवं चतुर्थसर्गे मगधं वा पुष्पपुरं पुनर्नामतोऽपि न

Scanned with CamScanner

देशास्थितिकालनिर्णयः । अतो विक्रमपूर्वद्वादशशतकमारभ्य विक्रमानन्तरषष्ठशतकपर्यतं समालोचकाः तत्स्थितिकालपूर्वपरसीमां मन्यन्ते। तेषु हि ये खलु कालिदासं विक्रमानन्तरषष्ठशतकभवं मन्यन्ते फर्युसनमहाशयोऽग्रणीः । स हि रघुवंशे हूणपराजयवर्णनमवलोक्य तद्विक्रमानन्तरैकोत्तरषट्शतवर्षघटितोज्जयिनीनरेशयशोधर्मकृतहूणपराजयेन संयोज्य कालिदासं तस्यैव राज्ञः सभापण्डितं मन्यते । इतिहासे हि घटनैषा कारूरसङ्ग्रामनाम्ना ख्याता । फर्ग्युसनानुसारेण अनेनैव राज्ञा हि हूणाः पराजित्य विक्रमादित्योपाधिधारणं कृतमासीत् प्रवर्तितश्च तेन विक्रमशको यस्य प्राचीनत्वसिद्धये षट्शतवर्षाणि तत्र योजितानीति । किन्तु मतमिदं नैव निर्दोषं यतो हि तत्पूर्वमेव शकोऽयं मालवनाम्ना प्रचलित आसीदिति -

मालवानां गणस्थित्या याते शतचतुष्टये।

त्रिनवत्यधिकेऽब्दानाम्रितौ सेव्यघनस्तने।।

सहस्यमासशुक्लस्य शिस्तेऽह्नि त्रयोदशे ।

मङ्गलाचारविधिना प्रासादोऽयं निवेशितः।।

इति बन्धुवर्मणो मन्दसोरशिलाभिलेखतस्तथैव

Scanned with CamScanner

षट्शतवर्षपूर्वभवमनतिख्यातयशसमग्निमित्रं नायकीकरोतीति तर्कः कुतर्क एव मन्यते। अपरञ्च रघुवंशेड१४.समुपवर्णितस्य पाण्ड्यराज्यस्य यस्योरगाख्यं पुरं राजधानी आसीत् गुप्तकाले नामाऽपि न श्रूयते स्वतन्त्रराज्यरूपेण । तदस्तित्वं तु शुङ्गकाल एवासीत्।

सङ्क्षेपतः कालिदासविषये वासुदेवमहोदयेन कतिपयानि तथ्यानि सङ्कलितानि तेषां विचारणया एतदेव सिध्यति यत्कालिदासः शुङ्गकालीन एव विशेषतोऽग्निमित्रसभासद् वैदिशः।

शुक्लकालीनत्वेन सम्मतासु 'भीट' मुद्रासु मृगमनुधावमानः कश्चिन्नृपः श्चित्रितो दृश्यते । अनेन मन्यते यदभिज्ञानशाकुन्तलस्य शुङ्गकाले एव रचना सम्मताऽऽसीत् । तादृशी घटनाऽभिज्ञानशाकुन्तले एव वर्णिताऽस्ति नान्यत्र । कालिदासस्य नैसर्गिकी शैली तमाचार्ययुगस्य प्रतिनिधित्वेनोपस्थापयति न तु पण्डितयुगीनत्वेन । तस्य हि रचनायां नैव कुत्रापि पाण्डित्यप्रदर्शनप्रयासः, न हि तत्र शब्दानामाडम्बरः, न चित्रता, नालङ्कारप्राचुर्यं न हि वर्णनस्यातिमात्रविस्तरः न च दुरूहत्वं कुत्रापि । उक्तमेव -

अस्पृष्टदोषा नलिनीव दृष्टा हारावलीव प्रथिता गुणौघैः।

प्रियाङ्कपालीव विमर्दहृद्या न कालिदासादपरस्य वाणी।।

शृङ्गेण च स्पर्शनिमीलिताक्षीं मृगीमकण्डूयत कृष्णसार:।।

अनेन कालिदासस्य पण्डितयुगात्प्रागेव सम्भव: मन्यते। कालिदासस्य अमरसिंह-वराहमिहिरादिसमकालिकत्वं यदुच्यते तदपि सत्याद् दूरमेव मन्यते। यतो हि कालिदास: पेलवशब्दं कोमलेऽर्थे प्रयुनक्ति यथा कुम्मारसम्भवे - पदं सहेत भ्रमरस्य पेलव शिरीषपुष्पं न पुन: पतत्रिण:। इति । अमरसिंहस्तु 'पेलवं विरलं तनु' इति पठति । एवमेव कालि-दासो हि परमेष्ठिपदेन विष्णुं जानाति । 'अमरसिंहस्तु तत्पितामहपर्यायवाचकं मन्यते'। कालिदासो हि छन्दोमात्रैकगोचरानपि शब्दान् यत्र कुत्र प्रयुनक्ति यथा वेदेषु - 'आ नो भद्रा: कृतवो यन्तु विश्वत: ।' कालिदासोऽपि - तं पातयां प्रथममास पपात पश्चात् । संयोजयां बिधिवदास समेतबन्धु: इति।

अनन्तरकालिकेषु कविषु नेदृशी प्रवृत्ति: दृश्यते । तेन हि कालिदासेन वैदिकला-किकसंस्कृतसन्धि-कालभवेन भाव्यम् इति मन्यते। कालश्चायं विक्रमपूर्वचतुर्थशतकाद-ारभ्य विक्रमोदयं यावदभ्युपगत: । कालिदासो हि परशुरामं केवलं मुनिरूपेणैव जानाति । स हि अधिकांशत: साकेतनिमित्तमयोध्याशब्दमेव प्रयुनक्ति वाल्मीकिवत् । यथा -

पुरमविशदयोध्यां, आलोकयिष्यन् मुदितामयोध्यां, गृहवर्जमयोध्यया, सैन्यैरया-ध्याभिमुख: प्रतस्थे, अयोध्यादेवताश्चैनं। साकेतशब्दस्य प्रयोगस्तु स्वल्प एव । यथा रघुवंशे - जनस्य साकेतनिवासिनस्तौ,साकेतोपवनमुदारमध्युवास इति । अनेनापि कालिदासस्य आचार्ययुगीनत्वं सिध्यति । पतञ्जलिरपि साकेतस्यैव बहुधा प्रयोगं करोति । 'अरुणधवन: साकेतम्' इत्यादौ । यद्यपि अभिज्ञानशाकुन्तलस्य कासुचित्प्रतिषु प्रस्तावनायां 'रसभावविशेषदीक्षागुरोर्विक्रमादित्यस्य अभिरूपभूयिष्ठा परिषद्' इत्युक्तं दृश्यते तथैव नैतावदेव पर्याप्तं प्रमाणं कालिदासस्य विक्रमादित्यसभापण्डितत्वस्य ।

प्रथमं तु विक्रमादित्यशब्दो वस्तुत: संज्ञा उत उपपदमित्यप्यद्यावधि नैव निर्णीतम् । अत्रत्यं हि 'रसभावविशेषदीक्षागुरो:' इति विशेषणमपि साभिप्रायमेव दृश्यते । किं शकारिर्हि विक्रमादित्याख्यो नृप: कालिदासस्य रसभावविशेषदीक्षागुरु: सम्भवति ? यदि तथा तर्हि का तस्य वैशिष्टयसमर्थनपरा कृति: ? सम्भवतो नैव । तेन हि पदमिदमुपपदमेव कस्यचित्तादृशयोग्यतासम्पन्नस्य राज्ञ: । तर्हि कोऽसौ नृप इत्यपेक्षायामुच्यते सम्भवत: स हि मृच्छकटिकस्य कर्तृत्वेन सम्मत: शूद्रक एव । तथ्यमेवेदं समुद्रगुप्तप्रणीते कृष्णचरिते समुद्घाटितमस्ति । यदि शुदक: कालिदाससमकालिको वा तदाश्रयस्तदा स यदा भास-

Scanned with CamScanner

तस्याभवन्नरपतेः कविराप्तवर्णः श्रीकालिदास इति योऽप्रतिमप्रभावः।

दुष्यन्तभूपतिकथां प्रणयप्रतिष्ठा रम्याभिनेयभरितां सरसाञ्चकार।। इति ।

अग्निमित्रकाले एव सिन्धोः दक्षिणरोधसि यवनानां प्राबल्यमासीदिति मालविकाग्निमित्रतो ज्ञायते । सम्भवति पुष्पपुरं प्रत्यागतेऽग्निमित्रे शूद्रको हि विशालां शशासेति । शूद्रकोऽपि ब्राह्मण एव । तेनाग्निमित्रशूद्रकयोः यौनसम्बन्धोऽपि सम्भवति । शुद्रकस्य पुत्रो देवमित्रो यथाऽग्निमित्रस्य वसुमित्रः । शूदकस्य अग्निमित्रसद्योऽनन्तरकालिकत्वमैतिह्यासकदृष्ट्याऽपि सम्भवति । सम्भवति अग्निमित्रे पुष्पपुरं प्रति प्रस्थिते कालिदासः शूद्रकं समाश्रितवान् । यतो हि तस्य मालविकाग्निमित्रं प्रथमा कृतिरिति तस्यैव प्रस्तावनायाः 'पुराणमित्येव न साधु सर्वम्' इति वचनात् सिध्यति । विक्रमोर्वशीयं हि त्रोटकमवान्तरचना । अभिज्ञानशाकुन्तलञ्च नाटकेषु चरमम् । शुङ्गाः सर्वेऽपि माहेश्वरी यथा कालिदासः । शूद्रकोऽपि परमशैवः ज्ञात्वा शर्वप्रसादाद् इति तत्रोक्तेः । एवमेव तस्य श्रव्यकाव्येऽपि ऋतुसंहारं प्रथमा कृतिः, कुमारसम्भवं मेघदूतं रघुवंशञ्च ततः क्रमेण प्रणितानि ।

शूद्रको हि जीवनकाले एव पुत्रं देवमित्रं राज्येऽभिषिच्य वनं प्रविष्ट आसीत्तपसे । शुङ्गा हि १ ३ ९ वर्षाणि भुवं बुभुजुर्यत्र पुष्यमित्र एक एव षष्टिवर्षाणि महीं शशास । ततश्चाग्निमित्रः केवलं सप्तवषाण्येव डकालिदासस्य हि अग्निवर्णाग्निमित्रावभावेव विलासिनावल्पायुषौ च .ततश्च वसुमित्रो दशवषणि । वसुमित्रानन्तरं शुङ्गा हि क्षीणबला

कविमूर्धन्यः, स्वकीयकुलकेतनः, सर्वतन्त्रस्वतन्त्रः, सकलशास्त्रासारानश्यन्दः, काव्यकोशविकासविभाकरः, वैदर्भीरीतिसभाजनसभ्यः, प्रसादगुणालम्बनः, उपमासीमन्तिनी-सीमन्तसिन्धूरदानसरसः, कविताकामिनीविलासः, काव्यरचनाविक्रमादित्यः, श्रीविक्रमादित्य कविकादम्बकदम्बसमाराधितपादपद्मः, मुकुटालङ्करणारहितोऽपि सार्वभा-

Scanned with CamScanner

वादप्रसङ्गो नाटकं रञ्जयति विशेषेण । स्त्रीप्रधानमिदं नाटकं नाटिकाप्रकृतिकम्।

विक्रमोर्वशीयम्

विक्रमोर्वशीयं हि पञ्चस्वङ्केषु विभक्तं त्रोटकम् । अत्र हि पुरुरवस ऊर्वश्याश्च प्राधान्येन प्रेमव्यापारो वर्णितः। केशिदैत्येन पीड्यमानोर्वशी पुरुरवसा विक्रम्य रक्ष्यते । परस्परावलोकनेन तौ हि स्नेहाद्रचित्तौ भवतः। नायके नितान्तमनुरक्तोर्वशी नाटकाभिनयानन्तरे पुरुषोत्तमेति वक्तव्ये पुरूरवा इत्युच्चरति । तेन 'भुवं गच्छ' इति भरतेन शप्ता पुरूरवसा सह परिणीता भवति । अथ च प्रणयकुपितोर्वशी निषिद्धस्त्रीप्रवेशां कार्तिकेयवनीं प्रविष्टा लतायां परिणता भवति । पुरूरवा अपि तां कथञ्चित्तत्र पूर्वभावं प्रत्यावर्तयति । पश्चाच्च यावज्जीवमेव पुरन्दरेण तयोः संयोगेऽनुमते त्रोटके समाप्नोति ।

अभिज्ञानशाकुन्तलम्

दुष्यन्तं पश्यन्ती शकुन्तला, राजा रविवर्मा

Scanned with CamScanner

विलोक्य नूनं भृशमुत्सुकाश्चिरं निशाक्षये याति ह्रियेव पाण्डुताम्।।

वर्षावर्णनं यथा -

निपातयन्त्यः परितस्तटद्रुमान्प्रवृद्धवेगैः सलिलैरनिर्मलैः।

स्त्रियः सुदुष्टा इव जातिविभ्रमाः प्रयान्ति नद्यस्त्वरित पयोनिधिम्।।

पयोधरैर्भीमगभीरनिस्वनैस्तडिद्भिरुद्वेजितचेतसो भृशम्।

कृतापराधानपि योषितः प्रियान् परिष्वजन्ते शयने निरन्तरम्।।

शरद्वर्णनं यथा

Scanned with CamScanner

वलम्बनार्थो स्वकुशलमयमुदान्तं प्रियायै प्रेषयितुमिच्छन् तन्निमित्तमुदगुच्चलितं बलाहकं प्रार्थयते निदशति च मार्गं रामगिरितः आरभ्यालकापर्यन्तम् । तदनुसारेण रामगिरितः आम्रकूटस्ततश्च नर्मदा ततो वेत्रवती ततश्च विदिशा ततश्च वामेन विशाला तदनु कुरुक्षेत्रं ततः कनखलं ततः कैलाशस्तदनु मानसं ततोऽलकेति गन्तव्यमार्गः । ततश्च अलकायां गृहपरिचयानन्तरं सन्देशकथनं ग्रथितमस्ति । सन्देशश्च नितान्त एव मार्मिकः। यथा -

त्वामालिख्य प्रणयकुपितां धातुरागैः शिलायामात्मानं ते चरणपतितं यावदिच्छामि कर्तुम्। अस्त्रैस्तावन्मुहुरुपचितैर्दृष्टिराप्यते मे क्रूरस्तस्मिन् न सहते सङ्गमं नौ कृतान्तः।।

समालोचकाः ह्यत्र वाल्मीकीयरामायणस्य वर्षावर्णनस्य हनुमतो दौत्यस्य च प्रभावं पश्यन्ति । काव्यस्याय वैदर्भी रीतिः कवेरपूर्ववर्णननिपुणता प्रस्फुटन्ती पदे पदे प्रतिभा च काव्यमिदं सर्वोत्कृष्टकोटौ स्थापयन्ति । एतच्च पश्चादनेकेषां दूतकाव्यानामुपजी-व्यमप्यभूत् । यथा हि विक्रमस्य नेमिदूतं, वादिचन्द्रस्य पवनदूतं, व्रजनाथस्य मनोदूतं,

Scanned with CamScanner

द्रवयाः स पुरन्दरप्रेरणया तारकासुर निहन्ति । सर्वतोभावेन कमनीयतमेऽस्मिन् काव्य सर्वेऽपि श्लोका भाव-भावस्वभाव नवनवत्वनयन्ति । दिङ्मात्रमुद्धरणं यथा -

यत्रांशुकाक्षेपविलज्जितानां यदृच्छया किम्पुरुषाङ्गनानाम्।

अवचित बलिपुष्पा वेदिसम्मार्गदक्षा नियमविधिजलानां बर्हिषाञ्चोपनेत्री।

गिरिशमुपचचार प्रत्यहं सा सुकेशी नियमितपरिवेदातच्छिरश्चन्द्रपादैः।।

तं वीक्ष्य वेपथुमती सरसाङ्गयष्टिः निक्षेपणाय पदमुद्धृतमुद्वहन्ती।

मार्गाचलव्यतिकराकुलितेव सिन्धुः, शैलाधिराजतना न ययौ न तस्थौ ।

एवंवादिनि देवर्षौ पार्श्वे पितुरधोमुखी लीलाकमलपत्राणि गणयामासे पार्वती।।

नवपरिणयलज्जाभूषणां तत्र गौरी वदनमपहरन्तीं तत्कृताक्षेपमीशः ।

Scanned with CamScanner

आवहति । कालिदासेन अन्यानि काव्यानि नाटकानि ग्रथितानि चेदपि संस्कृतग्रन्थकाराः तं रघुकविः इति प्राशंसन् । तस्मात् अस्य काव्यस्य उत्कृष्टता अवगम्यते । दशमसर्गादारभ्य पञ्चदशसर्गपर्यन्तं रामस्य कथा वर्णिता । तदुत्तरं रामवंश्यानां तत्तन्नृपाणां चरितानि उपन्यस्तानि । अन्तिमः सर्गो गर्भान्धस्याग्निवर्णस्य अभिषेकेण समाप्यते –

तपस्यास्तथाविधनरेन्द्रविपत्तिशोकादुष्णैर्विलोचनजलैः प्रथमाभितप्तः ।

निर्वापितः कनककुम्भमुखोज्झितेन वंशाभिषेकविधिना शिशिरेण गर्भः ।।

कालिदासः अग्निवर्णपरवर्तिनां राज्ञामपि वर्णानं चिकीर्षति स्म । परमसौ कालेन कवलीकृतः। अन्ये पुनः कालिदासेन परतोऽपि रघुवंशस्य सर्गाः लिखिताः परन्तु ते न प्राप्यन्ते इत्याहुः । बहवः तु कालिदास-अग्निवर्णसमकालिकतया ग्रन्थस्य तत्पर्यन्तां समर्थयन्ते । रघुवंशः येषां राज्ञां वर्णनानि सन्ति, येषां रामायणवर्णितनृपैः सह भेदः आपतति, परन्तु वायुपुराणवर्णितरामवंशावल्या सह रघुवंशवर्णितरामवंशावली भूयसा सामञ्जस्यं धारयति ।

रघुवंशं हि कालिदासस्य प्रौढतमं काव्यं मन्यते । अस्य हि सम्प्रति एकोनविंशतिसर्गाः प्राप्यन्ते । विश्वस्यते हि काव्येऽस्मिन् ततोऽप्यधिकाः सर्गाः सम्भवन्तीति यतस्तत्र ग्रन्थसमाप्तिसूचकं नैव पद्यं लभ्यते । काव्यमिदं वागर्थरूपपरमेश्वरयुगलवन्दनया प्रारभ्यते । सश्रीकोऽपि कोशलेन्द्रो दिलीपोऽनपत्यतया तदर्थं वसिष्ठाश्रमं गच्छति । कुलगुरुस्तदर्थं सुरभीशापं निवारकं विज्ञाय तन्निमित्तं नन्दिनीसेवनायादिशति । स्वरक्षार्थं समर्पितदेहाय तस्मै नन्दिनी पुत्रप्राप्तिरूपवरं ददाति । दिनेषु गच्छत्सु सुदक्षिणा रघुं प्रसूते। रघोरपि अजस्तस्य दशरथाख्यः सुतः क्रमेण पृथिवीं पालयतः । दशरथस्य सम्पादितपुत्रेष्टियज्ञस्य राम-भरत-लक्ष्मण-शत्रुघ्नाख्याश्चत्वारः पुत्राः भवन्ति । रामो हि धनुःषणं विजित्य ज-

Scanned with CamScanner

जलाविहारवर्णनञ्च, सप्तदशे राज्याभिषेकवर्णनमतिथेः, एकोनविंशेऽग्निवर्णस्य कामकेलिवर्णनं काव्यस्यास्य समुल्लेखनीया विषयाः ।

केचिदस्य काव्यस्य सप्तदशसर्गे एवावसानं मन्यन्ते । तदवसानपद्यमपि तथासूचकमेव दृश्यते नैव च तदनन्तरवर्तिनोरध्याययोः कालिदाससम्मता चमत्कृतिरपि। एवं मन्यते यदत्र द्वौ पक्षौ सम्भवतः । प्रथमस्तु काव्यमिदं सप्तदशसर्गे एव विरचितं सम्भवति अपरश्च यदि न तथा तदाऽस्य एकोनविंशतिसर्गानन्तरमपि आसन्नन्येऽपि कतिपये सर्गाः ये खलु कालेन कवलिताः । अथवा एदन्तराले एव कवि पार्थिवं विग्रहमत्यजदिति । अथवा हि प्राच्यसंस्कृतिसमुन्नायको हि कविर्न तथाऽप्रशस्ते प्रसंगे स्वं काव्यं समापयिष्यति ।

स्तोत्राणि

कालीस्तोत्रं, गङ्गाष्टकं, चण्डिकादण्डकं, श्यामलादण्डकं, मकरन्दस्तवः, अम्बास्तवः, लक्ष्मीस्तवः, लघुस्तवः, कल्याणस्तवः, शृङ्गारतिलकप्रभृतीनि च ।

महाकवेः कालिदासस्य विद्वत्तायाः व्यक्तित्वस्य विषये च तस्य ग्रन्थाः एव निरूपयन्ति । तस्य त्रिषु नाटकेषु च आदौ शिवस्तुतिः विद्यते । कुमारस्कन्दस्य जननं वर्णयित्वा किञ्चित् काव्यमेव अलिखत् । रघुवंशस्य आरम्भे पार्वतीपरमेश्वरं च सम्प्रार्थितवान् । अभिज्ञानशाकुन्तलस्य अन्तिमभागे नीललोहितः मुक्तिं मे ददातु इति शिवं प्रार्थयामास । एतैः कारणैः कालिदासः शिवभक्तः इति स्पष्टं भवति । परम् अन्यत्र सः ब्रह्माणं विष्णुं च अस्तौत् । एतत् अस्य सौहार्दपूर्णव्यक्तित्वस्य निदर्शनम् । तस्य कृतिषु वैदिकयज्ञयागादिनाम् उच्चस्थानम् अस्ति । उपनिषदां तत्वानि जीवनदृष्टेः आधारभूतानि इति परिदृश्यते ।

नाटकानि

मालविकाग्निमित्रम्-एतत् राज्ञः अग्निमित्रस्य कथा अस्ति। सः मालविका नाम सेविकाम् अकामयत्। एतं विषयं ज्ञात्वा स्वराज्ञी अक्रुध्यत् ि मालविकाम् आसेधयत् च। परन्तु मालविका राजपुत्री आसीत्। तस्याः जन्म ज्ञात्वा राज्ञ्याः अनुमत्या अग्नि-

Scanned with CamScanner

रघुवंशम्-रघुवंशम्' महाकविना कालिदासेन विरचितमेकं महाकाव्यमस्ति। महाकाव्येऽस्मिन् राज्ञः रघोः वंशस्य पूर्णं वर्णनमस्ति। सूर्य-प्रभवस्यास्य वंशस्य मनु-दिलीप-अज-दशरथ-रामादीनां सर्वेषां नृपाणां विस्तृतं वर्णनमस्ति।

कालिदासस्य काव्यवैशिष्टयम्

कविकुलगुरुः कालिदासः संस्कृतवाङ्मये स्वप्रकृते प्रथमोऽन्तिमश्च कविः । कथितं हि -

पुरा कवीनां गणनाप्रसङ्गे कनिष्ठिकाधिष्ठितकालिदासः।

अद्यापि तत्तुल्यकवेरभावादनामिका सार्थवती बभूव।। इति ।

स हि वैदर्भरीतेः कविः । स्वल्पसमासा स्वभावसरला च तस्य शैली सर्वानेव सद्य आकर्षयति इति तस्य कलापक्षापेक्षया हृदयपक्षस्य प्राधान्यं काव्येषु । मूलतः स अभिधायाः कविः किन्तु तस्य काव्यं ध्वनिप्रधानम् । स हि गूढमप्यर्थं सरलतया व्यनक्ति । तत्र हि रसस्य तथा प्राञ्जला सिद्धिर्यया कमनीयता तत्रैव कृतनिवासा दृश्यते । स हि न कुत्रापि पश्चाद्वर्तिकविरिव पाण्डित्यं प्रदर्शयति । तस्य हि सर्वाण्यपि पात्राणि नैव विचारवाहकान्यपि तु स्पष्टव्यक्तिकानि कथानुकूलानि च । सर्वोऽपि पात्रवर्गः स्वे स्वे स्थानेऽनुकूलत्वेन निबद्धोऽस्ति । तस्य काव्ये समय-स्थानक्रियाणां समन्वितिः स्पष्टं दृश्यते । प्रसादगुणसमुज्ज्वला तस्य कृतिनतराञ्चमत्कारातिशयं बिभर्ति । यथा हि -

Scanned with CamScanner

शरीरमात्रेण नरेन्द्र तिष्ठन्नाभासि तीर्थप्रतिपादितर्द्धिः ।

आरण्यकोपात्तफलप्रसूतिः स्तम्बेन नीवार इवावशिष्टः।।

तस्य हि उपमाचमत्कारस्तु सर्वानेवातिशेते । यद्यपि तत्कृतौ यमकोत्प्रेक्षाऽर्थान्तरन्यासादीनाम् अप्यलङ्काराणां कमनीयः प्रयोगो दृश्यते, तथापि स हि उपमानिपुणः प्रतिभाति सर्वत्र । स हि प्रायः पूर्णोपमामेव प्रयुनक्ति काव्ये चमत्कारोत्कर्षाय । यथा हि -

सञ्चारिणी दीपशिखेव रात्रौ यं यं व्यतीयाय पतिंवरा सा।

नरेन्द्रमार्गाट्ट इव प्रपेदे विवर्णभावं स स भूमिपालः।।

रघुवंशे हि नवमे सर्गे तेन हि यमकप्रयोगोऽपि तथैव विहितः । यथा हि -

परिचयं चललक्ष्यनिपातने भयरुषोश्च तदिङ्गितबोधनम्।

श्रमजयात्प्रगुणाञ्च करोत्यसौ तनुमतोऽनुमतः सचिवैर्ययौ।।

Scanned with CamScanner

मार्गाचलव्यतिकराकुलितेव सिन्धुः शैलाधिराजतनया न ययौ न तस्थौ ।।ड५०.

एभिरन्यैश्च वैशिष्ट्यैः कालिदासः कविकुलगुरुः, स्मृतोऽनुकृतश्च पश्चाद्वर्तिभिः कविभिः ।

उद्धरणानि

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थः प्रतिपत्तये।

जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ।।

-रघुवंशम्

अश्वघोषः

संस्कृतसाहित्यस्य सुप्रसिद्धः कविः। साकेतनगरम् अस्य जन्मस्थानम् । साकेतनगरम् अधुनातनम् अयोध्यानगरमेव । एष आर्यसुवर्णाक्ष्याः पुत्र इति अस्य सौन्दरानन्दकाव्यान्ते आर्यसुवर्णाक्षीपुत्रस्य साकेतकस्य भिक्षोराचार्यभदन्ताश्वघोषस्य महाकवेर्महावादिनः कृतिरियम् । इत्यस्मात् वाक्यादवगन्तुम् शक्यते । अस्य काल ईशायाः प्रथमशताब्दीति स्वीकृयते जिज्ञासुभिः । अयं सम्राजः कनिष्कस्य समकालिकः आसीत् । अश्वघोषः कनिष्कराजस्य गुरुः इति, सः जन्मना ब्राह्मणः आसीदिति, वेदादिशास्त्रेषु निष्णातः प्रतिवादिभयङ्करः महापण्डित आसीत् इत्यपि ज्ञायते। पश्चात् अश्वघोषः बुद्धस्य उपदेशैः आकृष्टः बुद्धसङ्घाध्यक्षात् वसुमित्रात् बौद्धदीक्षां प्राप्य बौद्धमतमङ्गीकृतवान् । अयम् सङ्गीतेऽपि परिणतः आसीत् । अस्य गायनसमये अश्वाः अपि गानश्रवाणपरवशाः भूत्वा तत्समये तृणादीनि न सेवन्ते स्म । अत एव ठअश्वघोषठ इति अस्य नाम जातम् इति विचिन्तकाः वदन्ति ।

अश्वघोषः स्वर्णाक्षीपुत्रः पार्श्वस्य शिष्यश्च कथ्यते । स हि मगधराजाश्रितः आसीत् । उत्तरभारतशासकः कनिष्को मगधाधीशम् आक्रमणेन नमयित्वा राज्यस्य परिवर्त्ते वस्तुद्वयं दातुमादिष्टवान् – १. बुध्दस्य पात्रम् २. अश्वघोषञ्च । राजा मगधानां पात्रं दातुमुद्यतोऽपि कविमश्वघोषं दातुं नैच्छत् मन्त्रिणस्तं तथाऽवलोक्य चिन्ताग्रस्ता अजायन्त । राजा मन्त्रिणां बोधनाय उपायमेकं कृतवान् । स हि स्वाश्वशालास्थितेभ्योऽश्वेभ्यो दिनमेकं यावत् ग्रास् प्रदानं न्यषेधत् । दिनान्तरे सर्वेषां हयानामग्रे ग्रासं प्रदाय अश्वघोषाय स्वसङ्गीतिं कर्तुं

Scanned with CamScanner

नाटिका खण्डितावस्थायां लभ्यते । एतेषां ग्रन्थानां समाप्तिवाक्येषु स्वमातरम् सुवर्णाक्षीं स्मरत्येषः । वेदं, रामायणं, महाभारतम्, आर्हतं, सांख्यं, वैशेषिकादिदर्शनानि च एषः सम्यक् जानाति स्म । अश्वघोषस्य नाटकानि लक्षणशास्त्रानुगुणानि एव सन्ति । अश्वघोषस्य कालिदासस्य च काव्येषु साम्यं दृश्यते । आचार्यपार्श्वेन अभिधम्मपिटकम् नाम्नः ग्रन्थस्य महाविभाषानामकम् व्याख्यानम् रचयितुं साहाय्यार्थम् अश्वघोषः काबूल्नगरं प्रति आहूतः आसीत् । इदं व्याख्यानं कनिष्कराजस्य काले विलिखितमिति ज्ञायते । अयं स्वस्य 'सूत्रालङ्कारशास्त्रग्रन्थे' आश्रयदातारम् कनिष्कम्, आचार्यम् पार्श्वम्, महाभाषाव्याख्यान-कर्तारम् वसुमित्रम् च स्तौति । एतान् ग्रन्थान् अतिरिच्य वल्लभदेवस्य सुभाषितावलौ अश्वघोषस्य पञ्च श्लोकाः दृश्यन्ते ।

अश्वघोषस्य साहित्यिकं पाण्डित्यं बौध्दर्शनज्ञानंचातीव गभीरमासीत् । स हि दार्शनिकमपि तथ्यं सरससरलशैल्यां समुपस्थापयति । अश्वघोषः पूर्वं ब्राह्मण आसीदतो ब्राह्मणसाहित्यस्यापि गाढं ज्ञानं रक्षति स्म । तत्कालप्रचलितानां नीतिशास्त्रकौटिल्यार्थ-शास्त्रवैद्यकादीनां ज्ञानेन सह व्याकरणस्य विस्तृतं ज्ञानं तेन रक्ष्यते स्म । तदीयं बा-ध्ददर्शनज्ञानं तु नितान्तसबलमासीत्, असौ योगाचारमतस्यास्थापक आसीत् । अश्वघोषेण शब्दानां विशिष्टेऽर्थं प्रयोगः कृतो योऽन्यत्र नासाद्यते, यथा ग्रन्त्री' शब्दो यानार्थे 'धर्मन्' शब्दश्च व्यवहारार्थे ।

काव्यशैली

आश्वघोषः शैल्या कालिदासम् अनुकरोति इति भासते । कालिदासः यं शब्दं

Scanned with CamScanner

४.:ततो नृपस्तस्य निशम्य भावम्, पुत्राभिधानस्य मनोरथस्य ।

स्नेहस्य लक्ष्म्या वयसश्च योग्याम् आज्ञापयामास विहारयात्राम् ।। बुद्धच. ३-३

५.:तां सुन्दरीं चेन्नलभेत नन्दः, सा वा न सेवेत नतं नतभ्रूः ।

द्वन्द्वं ध्रुवं तद्विकलं न शोभेतान्योन्यहीनाविव रात्रिचन्द्रौ ।। सौन्दरा.

६.:नावजानामि विषयान् जाने लोकं तदात्मकम् ।

अनित्यं तु जगन्मत्वा नात्र मे रमते मनः ।। बुद्धच. ४-८४

भवभूति

संस्कृतनाटककर्तृषु कविषु अतीव प्रसिद्धः । बहूनां संस्कृतकवीनां यथा तथैव भवभूतेरपि जीवनचरितम् नातीव ज्ञायते । अयम् महावीरचरिते नाटके स्वस्य विषये किञ्चिदिव विवृणोति; यथा- तत्र केचित् तैत्तरीयिणः काश्यपाश्चरणगुरवः पङि्तपावनाः पञ्चाग्नयो धृतव्रताः सोमपीथिन उदुम्बरनामानो ब्रह्मवादिनः इति । तत्र स्वपरिचयं वदता भवभूतिना भट्टगोपालस्य पौत्रः पवित्रकीर्तेः नीलकण्ठस्य आत्मसम्भवः श्रीकण्ठपदलाञ्छनो जातुकर्णीपुत्रः इति अभिहितम् । भवभूतेः प्रथमं नाम ठश्रीकण्ठःठ इति श्री एम्.आर्. तेलङ्गमहाशयः स्वग्रन्थे मालतीमाधवस्यसंस्कृतभाषाकथानुवादे लिखितवान् । अयं भवभूतिनामा कविः वेदान्तशास्त्रे, न्यायशास्त्रे, व्याकरणशास्त्रे ब्रह्मविद्यायां च निष्णातः आसीत् इति अस्य कवेः कृतिभिः ज्ञायते । एष काश्यपगोत्रजः । आपस्तम्बसूत्रस्य उदुम्बरब्राह्मणशाखायाम् जनिम् अलभत । अस्य माता जातुकर्णी । पिता नीलकण्ठः । पितामहः भट्टगोपालः । ज्ञाननिधिः भवभूतेः गुरुः । एष दाक्षिणात्यः । विदर्भदेशे [illegible]

Scanned with CamScanner

तर्क-व्याकरण-पूर्वोत्तरमीमांसादीनि शास्त्राणि । अस्य पितृकृतं नाम श्रीकण्ठ इति ।ठ अपि च सः भवभूतिरिति नाम्नः कारणं निरूपयति यथा-

तपस्वी कां गतोऽवस्थाम् इति स्मेराननाविव ।

गिरिजायाः स्तनौ वन्दे भवभूतिसिताननौ ।।

तथा च

साम्बा पुनातु भवभूतिपवित्रमूर्तिः इति परशिवम् अस्तौत् इति तस्यैव भवभूतिरिति नामान्तरं जातम्ठ इति । एष स्वस्य शाखाया आपस्तम्बशाखाया एतदर्हविजानीयाद् अहर्भार्यामावहते । त्रिरात्रमुभयोरधश्शय्या ब्रह्मचर्यं क्षारलवणवर्जनं च । एतद् वाक्यं ठमालतीमाधवेठ नाटके उल्लिखति । एतेन कवेः स्वाभिमानिता द्योतते ।

कालः

भवभूतिः कुमारिलभट्टस्य शिष्य इति पण्डिताः त्रिपाठीमहोदयाः स्वस्य ठ कविता-कौमुदीठ इति पुस्तके व्यलिखन् । कुमारिल भट्टाश्च क्रि.श.८मे शतमाने आसन् । अतः भवभूतेः कालः अष्टमशतकम् । तथा च कन्याकुब्जे श्रीहर्षवर्धनात्(द्वितीयशिलादित्यात्) अनन्तरम् राजसु मुख्यः ठयशोवर्माठ एषः क्रि.श.६९३ तः ७२९ पर्यन्तम् राज्यभारम् अकरोत् । यशोवर्मा क्रि.श.७३० तमे वर्षे चीनदेशं प्रति राजप्रतिनिधिं प्रेषितवान् आसीत् । ततः दशवर्षानन्तरम् काश्मीरराजात् ललितादित्यमुक्तापीडात् पराजितः । अयं यशोवर्मा एव भवभूतेः आश्रयदाता आसीत् । इममेव विषयं ठराजतरङ्गिण्याःठ एतेन श्लोकेन अवगन्तुम् शक्यते । यथा-

कविवाक्पतिराजश्रीभवभूत्यादिसेवितः ।

जितो ययौ यशोवर्मा तद्गुणस्तुतिवन्दिताम् ।।

Scanned with CamScanner

क्रमशः वीरश्रृङ्गारकरुणरसाः प्राधान्य वहन्ति।

बिरुदावलिः

वश्यवाक्यं कवेर्वाक्यम् इति महावीरचरिते अनेनैव उक्तत्वात् ठवश्यवाक्’ कविरिति अस्य बिरुदम् भवति । व्याकरणन्यायमीमांसादिषु शास्त्रेषु परिणतः इति हेतोः ठपदवाक्यप्रमाणज्ञठ इति चतुश्शास्त्राभिज्ञत्वात् ठभट्टठ इति नामभिः भवभूतिम् आह्वयन्ति । महाव्याख्यानकर्ता ठजगद्धरःठ श्रीकण्ठ इति भवभूतेः पाण्डित्येन प्राप्तम् बिरुदम् इति स्पष्टतया वदति ।

नाटकानि

मालतीमाधवम्

महावीरचरितम्

उत्तररामचरितम्

चतुशशास्त्रपारङ्गतस्य भवभूतेः मनसि स्त्रीषु महानादरः । तेषु दिवसेष्वेव अयं महाकविः स्त्रीशिक्षां प्रोत्सहते स्म । अयं विषयः तस्य रचनासु दृश्यते । यथा-

सर्वथा व्यवहर्तव्यं कुतो ह्यवचनीयता । यथा स्त्रीणां तथा वाचां साधुत्वे दुर्जनो जनः ।।

अस्य करुणरसपप्रधानम् उत्तररामचरितनाटकं न केवलं भारते देशे किन्तु प्रपञ्चेऽस्मिन् विशिष्टं स्थानमलभत । शाकुन्तलनाटकेन कालिदास इव उत्तरर-

Scanned with CamScanner

अत्र द्विजमुख्यतमः इति पदस्य क्षत्रियश्रेष्ठः इति [illegible] शिवप्रसादेन अस्मै दृष्टिर्लब्धा, तथा च अयम् अश्वमेधयज्ञं चकार, दशादिकैशतवर्षम् उषित्वा स्वपुत्राय राज्यं दत्त्वा स्वर्गलोकं जगाम।

ऋग्वेदं सामवेदं गणितमथ कलां वैशिकीं हस्तिशिक्षां

ज्ञात्वा शर्वप्रसादाद्व्यपगततिमिरे चक्षुषी चोपलभ्य ।

राजानं वीक्ष्य पुत्रं परमसमुदयेनाश्वमेधेन चेष्ट्वा

लब्ध्वा चायुः शताब्दं दशदिनसहितं शूद्रकोऽग्निं प्रविष्टः ।।

अस्यैव नाटकस्य प्रस्तावनायाः तृतीयश्लोके अयं 'द्विजमुख्यतमः कविर्बभूव प्रथितः शूद्रक इत्यगाधसत्तवः इति दत्तमस्ति। पुनः पञ्चमश्लोके 'क्षितिपालः किल शूद्रको बभूव' इति पठ्यते शूद्रक इति नाम अभीरराजस्य इन्द्रगुप्तस्य पिकनिकरः अपि आसीत्।

काल

अस्य कालनिर्णये बहवो मतभेदाः –

स्कन्दपुराणमतेन विक्रमादित्यात् पूर्ववर्त्ती नृपोऽयम् ।

अनेके विद्वांसो राज्ञा शिमुकेनान्ध्रभृत्यकुलोत्पन्नेन सहास्याभेदं कल्पयन्तोऽस्य समयं विक्रमप्रथमशतकं कल्पयन्ति ।

वामनः स्वग्रन्थे शूद्रकं स्मरति । वामनपूर्ववर्त्ती दण्डी स्वीये काव्यादर्शे 'लिम्पतीव तमोऽङ्गानीति शूद्रकपद्यमुध्दरति । एतेन सप्तमशतकपूर्ववर्त्तित्वमायाति।

मृच्छकटिकस्य नवमेऽङ्के बृहस्पतिर्मङ्गलविरोधितया स्मर्थते, वराहमिहिरश्च तयोमैत्रीमाह । एतेनास्य ग्रन्थस्य वराहमिहिरकालपूर्वभवत्वे सिध्दे वराहमिहिरस्य षष्ठशातकोत्पन्नतायां प्रतीतायां शूद्रकस्य तत्पूर्वकालिकत्वं मन्तव्यम् ।

चन्द्रबली पाण्डेयोऽमून्याश्रीत्य शूद्रकं वसिष्ठीपुत्रं श्रीपुलुमाविनाऽभिन्नं प्रतीत्य १३०-१५५ ख्रीष्टाब्दकालिकं प्रमापयति ।

Scanned with CamScanner

अर्थात् क्रि.श. १९०तमे जनिम् अलभत इति महाराष्ट्रभाषायाः ठसंस्कृतकविचरित ग्रन्थे निर्दिष्टम् । किन्तु अयं कस्य पुत्रः ? का पुनः एतस्य माता इत्यादिविचाराः न लभ्यन्ते ।

निदर्शनोक्तय

काव्यालङ्कारसूत्रवृत्तिकर्ता वामनः वदति यत्- शूद्रकादिरचितप्रबन्धे अस्य भूयान् प्रपञ्चो दृश्यते । इति । मृच्छकटिकनाटकस्य चतुर्थेऽङ्के यथा-

विषादस्त्रस्तसर्वाङ्गी सम्भ्रमभ्रान्तलोचना ।

नीयमाना भुजिष्या त्वं कम्पसे नानुकम्पसे ।।

भट्टनारायणः

'वेणीसंहार'नामकस्य प्रसिद्धस्य नाटकस्य रचयिता भट्टनारायणः। एषः अष्टमे शतके आसीत् इति पण्डिताः अभिप्रयन्ति । एषः कान्यकुब्जप्रदेशे जातः इत्यत्र तु न कस्यापि विमतिः ।

स्वीयेन एकमात्रेण वेणीसंहारनाम्ना नाटकेन भट्टनारायणः संस्कृतसाहित्येऽतितरां प्रख्यातः । किंवदन्ती प्रसिध्दा यद् गौडदेशशासकेन आदिशूरेण ब्राह्मणधर्म्मुत्रेतुं कान्य-कुब्जदेशादानीय निवासितेषु ब्राह्मणेष्वयमत्येक इति । आदिशूरः पालवंशोत्थानतः पूर्व-वर्त्ती राजेति तस्य समयः सप्तमशताब्द्या उत्तरार्धमास्थातुं युक्तम् । दशमशतकोत्पन्नओ

Scanned with CamScanner

उषित्वा वङ्गीयब्राह्मणाना मूलपुरुषो बभूवठ इति । वेणीसहारस्य भूमिकयापि अयमेवार्थः प्रतिपाद्यते । एते राजकुलीनाः भागवतसम्प्रदायम् अनुसरन्ति स्म ।

कविकालविचार

पाश्चात्यानां प्राच्यानां च पण्डितानाम् अभिप्रायेण भट्टनारायणः क्रि.श.८मे शतमाने अवर्तत । तथा च अष्टमशतकस्य अन्त्यभागे लब्धकीर्तिः वामनः भट्टनारायणकवेः वेणीसंहारात् कांश्चन श्लोकान् उदाहरति । अतः अयं कविः अष्टमशतकस्य पूर्वार्धे आसीदिति निश्चयेन वक्तुं शक्यते ।

वेणीसंहारम्डसम्पादयतु.

इयं भट्टनारायणस्य कृतिः । वीररसप्रधानं नाटकम् । अस्मिन् षट् अङ्काः विद्यन्ते । कथावस्तु तावत् महाभारते सभापर्वणि यदा दुश्शासनः द्रौपदीम् प्रधृष्य राजसभाम् आनयति, तदा तस्याः वेण्याः बन्धः श्लथते । तदैव भीमसेनः वनवासान्ते युद्धे दुश्शासन्-ास्य शोणितेन द्रौपद्याः कचान् आसिच्य, तस्य अन्त्रेणैव द्रौपद्याः वेणीबन्धम् करिष्यामि इति राजसभायां प्रतिज्ञां करोति । ततः स्वप्रतिज्ञानुगुणं भीमः दुर्योधनस्य ऊरुभङ्गम् कृत्वा तद्रक्तैः आर्द्रीकृत्य पाञ्चाल्याः वेणीं स्वहस्ताभ्यां बध्नाति । ततः युधिष्ठिरस्य राज्याभिषेकेण सह नाटकस्य मङ्गलान्त्यम् करोति । आत्मश्लाघाम् अकुर्वाणः, गम्भीरः, क्षमाशीलः, महासत्वः, धीरोदात्तश्च युधिष्ठिरः अस्य कथानायकः । अप्रगल्भादिलक्षणवती द्रौपदी एव अस्याः कथायाः नायिका । अपि च भीमः, दुर्योधनः, भानुमती, अश्वत्थामा, कर्णः, धृतराष्ट्रः, गान्धारी, चार्वाकिश्च अत्र पात्राणि भवन्ति । हास्यरसम् शान्तरसं च हित्वा अन्ये सर्वे रसाः अत्र अङ्गत्वेन समावेशिताः दृश्यन्ते । द्वितीयेऽङ्के शृङ्गारः, तृतीयेऽङ्के करुणः, बीभत्सः, रौद्रश्च, चतुर्थेऽङ्के भयानकः, षष्ठेऽङ्के अद्भुतश्च रसाः निरूपिताः ।

वेणीसंहारः भट्टनारायणस्य कृतिरत्नम्। नाटकेस्मिन् षडङ्काः भवन्ति। वेणीसंहारः महाभारतस्य कथाम् आधारीकृत्य लिखितः । संहारः = संहरणम् = एकत्रानयनम् । दुर्योधनादीनां संहारं कृत्वा द्रौपद्याः केशान् भीमः वेणीरूपेण बध्नाति इत्यतः एतस्य नाटकस्य नाम 'वेणीसंहारः' इति ज्ञातम् । एतत् नाटकं वीररसप्रधानम् । समग्रं नाटकं नाटकलक्षणानुगुणम् एव रचितम् अस्ति । अतः लक्षणनिरुपणावसरे बहवः लक्षणकाराः

Scanned with CamScanner

काव्येषु पञ्चमहाकाव्यानि प्रसिद्धानि। पञ्चमहाकाव्येषु अन्यतमस्य नैषधीयचरितस्य प्रणेता श्रीहर्षः अस्ति। सः कविः श्रीहीरपण्डितान्मामल्लदेव्यां समजनीति तस्य काव्यस्य प्रतिसर्गस्य समाप्तिश्लोकतः ज्ञायते।

श्रीहर्षं कविराजराजिमुकुटालंकारहीरः सुतं
श्रीहीरः सुषुवे जितेन्द्रियचयं मामल्लदेवी च यम्।
तच्चिन्तामणिमन्त्रचिन्तनफले श्रृङ्गारभङ्ग्या महा-
काव्ये चारुणि नैषधीयचरिते सर्गोऽयमादिर्गतः ।।

श्रीहर्षः कन्याकुब्जस्य नृपस्य विजयचन्द्रस्य आस्थानविद्वान् आसीत् । विजयचन्द्रस्य पुत्रस्य जयन्तचन्द्रस्य आस्थाने अपि सः आसीत् इति श्रूयते । तस्य पिता श्रीहरिः । माता

2.अर्णववर्णनम्

3.गौडोर्विकुलप्रशस्तिः चण्डीप्रशस्तिश्च

4.शिवभक्तिसिद्धिः

5.साहसाङ्कचरितचम्पू

परन्तु ते सर्वे न उपलभ्यन्ते । खण्डनखण्डखाद्यम् इति एकः ग्रन्थः उपलभ्यते । तस्मिन् ग्रन्थे तार्किकमतस्य खण्डनं कृतं दृश्यते ।

विशाखदत्तः

विशाखदत्त संस्कृतकविः नाटककारः च आसीत् । एतस्य पिता महाराजः पृथुनामा, पितामहः वटेश्वरदत्तः च आस्ताम् इति ज्ञायते मुद्राराक्षसम् नाटकस्य सूत्रधार वचनादस्मात्, यत् आज्ञापितोऽस्मि परिषदा यथाद्य त्वया सामन्तवटेश्वरदत्तपौत्रस्य महाराजपदभाक्पृथुसूनोः कवेः विशाखदत्तस्य कृतिः, अभिनवं मुद्राराक्षसम् नाम नाटकं नाटयितव्यमिति। अस्य पितुः भास्करदत्त इत्यपि नाम आसीत्, अपि च सः वत्सदेशस्य सामन्तराजः आसीत् । क्रमेण सः महाराजपदम् आरुरोह । स्वयं विशाखद्त्तः राजपुत्र आसीदिति कारणतः राजनीतिं सम्यगधीतवान् । एवम् प्रकृत्या अध्ययनेन च राजनीतिपारङ्गतः सन् विशेषतः कौटलीये अर्थशास्त्रे निष्णातो बभूव । जन्मना राजापि स्वभावेन कविः विशाखदत्तः स्वाधीतविद्यानुगुणम् निजप्रतिभाम् राजनीतिप्रख्यापनपरासु दृश्यकाव्यकृतिषु वितस्तार । एवं च एतेन विरचितानि त्रीणि नाटकानि श्रूयन्ते । तानि च देवीचन्द्रगुप्तम् मुद्रराक्षसम् अभिसारितवञ्चितकम् चेति । तेषु मुद्राराक्षसमेकम् एव अस्माभिः लब्धम् ।

संस्कृतमहानाटककारेषु अन्यतमः विशाखदत्तः कल्पनालोकम् विहाय वास्तवम् चरित्रम् च्रित्रम् इव व्यलिखत् । अयम् पाटलिपुत्रे आसीत् । पाटलिपुत्रम् गङ्गाशोणानद्योः सङ्गमस्य दक्षिणे दिशि अवर्तत । अस्य कुसुमपुरम् इति नामान्तरमपि विद्यते । पूर्वस्मिन् काले यत्र मुद्राराक्षसनाटकस्य कथा प्राचलत्, तत्रैवायं कविः जनिम् अल्भत । अयम् क्रि.श.५ तमशतमाने पूर्वार्धे आसीत् बहवो विमर्शकाः मन्नते । यतः पञ्चमशताब्दस्य उत्तरभागे विद्यमानः वराहमिहिरः एनम् अस्तौत् । पाट्लिपुत्रम् अस्य वासस्थानं कार्यस्थानं च अभवत् ।

क्रिस्तात् पूर्वकाले घटितस्य मगधानां महापतनस्य चन्द्रगुप्तोदयस्य चाणक्यतन्त्राणां कथाविस्तरस्य रूपकम् मुद्राराक्षसम् । एषा चाणक्यस्य कथा, चन्द्रगुप्तः अस्य नायकः । विष्णुपुराणेऽपि उक्तं यथा-

नव चैतान्नन्दान्कौटल्यो ब्राह्मणः समुद्धरिष्यति । कौटल्य एव चन्द्रगुप्तं राज्येऽ-

Scanned with CamScanner

भिषेक्ष्यति । अतः परं शूद्राः पृथिवीं भोक्ष्यन्ति । इति ।

बृहत्कथायाम् एवमुक्तम् -

चाणक्यनाम्ना तेनाथ शकटारगृहे रहः ।

कृत्यां विधाय सप्ताहात् सपुत्रो निहतो नृपः ।।

योगानन्दे यशःशेषे पूर्वनन्दसुतस्ततः ।

चन्द्रगुप्तः कृतो राज्ये चाणक्येन महौजसा ।।

अस्मिन् नाटके चाणक्यस्य प्रधानं पात्रम् । चणकः चाणक्यस्य जनकः । चाणक्यः साङ्वेदाध्यायी, ज्योतिश्शास्त्रे नीतिशास्त्रे च पारङ्गतः आसीत् । एतस्य विष्णुगुप्तः, कौटल्यः इति च नामान्तरे आस्ताम् । एषः अर्थशास्त्रम् इति ग्रन्थम् अलिखत् । अस्य अर्थशास्त्रस्य प्रसारमाध्यमम् इव इदम् नाटकम् भासते । पुरा पाटलिपुत्रम् अथवा कुसुम-पुरम् नाम्नि नगरे चन्द्रवंशीयः सर्वार्थसिद्धिः नाम राजा राज्यं शासति स्म । तस्य सुनन्दा नाम्नी पट्टमहिषी, शूद्रकुलसञ्जाता मुरा प्रियमहिषी च इति द्वे पत्न्यौ आस्ताम् । कस्यचन मुनेः अनुग्रहेण सुनन्दायां नव पुत्राः, मुरायाम् एकश्च तनयः इति दश पुत्राः अजायन्त । वृद्धाप्ये राज्ञा राज्ञ्याः ज्येष्ठपुत्रे राज्यं विनिक्षिप्य मुरापुत्रं (मौर्यम्)सेनाधिकारिणम् नियोजमास । कालक्रमेण मौर्यस्य शतम् पुत्राः समभवन् । एतेषु सर्वेभ्यः कनीयानेव चन्द्रगुप्तः ।

नन्दानां नाशाय, चन्द्रगुप्तस्य अभ्युद्याय च हेतुभूतं अमात्यराक्षसस्य मुद्राङ्गुलीयकम् । अतः कविः स्वनाटकम् मुद्राराक्षसम् इति अभिधत्ते ।

५.३ प्रश्न

१. नाट्यशास्त्रम् व्याख्याति करोति।

२. भासः अश्वघोषःविवृणोति करोति।

३. शूद्रक भट्टनारायणःविवृणोति करोति।

४. श्रीहर्षः आलोचयति करोति।

५.विशाखदत्तः व्याख्याति करोति।

Scanned with CamScanner

अध्याय : 6

संस्कृतगद्यवाड्.मयपरिचय:

एतत् अध्याय उत्तर अध्यायिन् विद्यार्थिन् समर्थ

संस्कृतगद्यवाड्.मयपरिचय:;

चम्पूकाव्य: ;

जयदेव , विष्णुशर्मा परिचय: ;

६.१ संस्कृतगद्यवाड्.मयपरिचय:

गद्यपद्ययो: प्रचलनं लेखने तदाऽप्यासीद् यदाऽनयोर्लक्षणमपि न केनाऽपि श्रुतम्। समस्तोऽपि ऋग्वेदश्चन्दस्येव राजते। कालांतरे तु छंदश्शब्दो वेदपर्याय एव संजात:। महावय्याकरण: पाणिनिस्तु वेदं छंदोनाम्नैव स्मरित, तद्यथा-बहुलं छन्दसि इति सूत्रे। ऋग्वेदे नैकच्छन्दसां प्रयोगोऽवलोक्यते यथाऽनुष्टुप्, गायत्री, विराट्स्थाना, जगतीत्यादि।

परंतु तत्रैव यजुर्वेदेच्छन्दोविरहितमपि लेखनं सन्दृश्यते, यत् तावत् परवर्ति गद्यम-नुहरति। तद्यथा रुद्राष्टाध्याय्याम्।

एका च मे तिस्रश्च मे, तिस्तश्च मे पंच च मे, पंच च मे सप्त च मे, सप्त च मे नव च मे, नव च मे एकादश च मे, एकादश च मे त्रयोदश च मे, त्रयोदश च मे पंचदश च मे, पंचदश च मे सप्तदश च मे, सप्तदश च मे नवदश च मे, नवदश च मे एकविंशतिश्च मे, एकविंशतिश्च मे त्रयोविंशतिश्च मे, त्रयोविंशतिश्च मे पंचविंशतिश्च मे, पंचविंशतिश्च मे एकत्रिंशच्च मे, एकत्रिंशच्च मे त्रयस्त्रिंशच्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्।- यजु १८.२४

एवं हि गद्यपद्यमयी उभय्यपि लेखनशैली वेदेष्ववलोक्यते। वेदाअंगभूतं ब्राह्मणवाड्. मयं गद्यपद्योभयमिश्रितं समवलोक्यते। क्वचित् पद्यबाहुल्यम् - यथा कठोपनिषदि। क्वचित् गद्यबाहुल्यम्, यथा बृहदारण्यकोपनिषदि। अन्यत्र द्वयो: समप्राधान्यम्। उपनिषद्गद्यमतीव सरलं ललितंच प्रतीयते। यथा-

ना वाऽरे पत्यु: कामाय पति: प्रियो भवत्यात्मनस्तु कामाय पति: प्रियो भवति। न वा पुत्रस्य कामाय पुत्र: प्रियो भवत्यात्मनस्तु कामाय पुत्र: प्रियो भवति। आत्मा वाऽरे श्रोतव्यो, मन्तव्यो निदिध्याासितव्यश्च। आत्मनि ज्ञाते सर्वं ज्ञातं भवति। वाचारम्भणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम्। -बृहदा.

Scanned with CamScanner

वेदवाङ्.मयप्रयुक्तेयमेव गद्यपरंपरा परवर्तिनि काले साहित्यसंरचनां श्रितवती। ख्रिस्तपूर्वचतुर्थशतकोत्पन्नो नाट्यशास्त्रकारो भरताचार्य: सर्वप्रथमं चूर्णनिबद्धशीर्षकाभ्यां बन्धं ??? द्विधाा विभाजितवान्। चूर्णबंध एव अनियताक्षरबंधोऽपि समुच्यते यत्खलु गद्यनाम्ना ख्यातं जातम्। तथैव निबद्धबन्धोऽपि नियताक्षरबन्धपर्याय: संजात:। अयमेव बन्ध: पश्चात् पद्यनाम्ना ख्यातिं भेजे।

गद्यस्वरूपसमीक्षा-

नियताक्षरबंधशब्दस्तु पद्यस्य स्वरूपमेव प्रकाशयते। नियतानि अक्षराणां स्थानानि (संख्या च) यस्मिन् स बंधो भवत्येव नियताक्षरबंध:। यथा-अलं महीपाल तव श्रमेण-इत्यत्र अक्षराणां स्थानं गणमहिम्ना नियतं वर्तते। पादेऽस्मिन् उपेन्द्रवज्राख्यं वृत्तं प्रयुक्तं वर्तते यल्लक्षणम्-उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ। अर्थात् यस्मिन् पादे जगण- (1S1) तगण - (SS1) जगण (1S1) गौ-(SS) क्रमेणाक्षराणि प्रयुज्येरन् तद्भवति उपेन्द्रवज्राख्याम् एवं हि पद्येऽस्मिन् तुरीयेष्वपि पादेषु अक्षराणां गुरुत्व-लघुत्वविधानं, संख्या चाप्यक्षराणां नियतैव वर्तते। प्रतिपादमेकादशाक्षराण्येव वर्तन्ते, न तावद्दश न चापि द्वादश। तद्यथा-

अलं महीपाल तव श्रमेण प्रयुक्तमप्यस्त्रमितो वृथा स्यात्।

न पादपोन्मूलनशक्तिरंह: शिलोच्चये मूर्च्छति मारुतस्य।।

यतो हि चतुर्भि: पादैर्नियम्यतेऽयं बंध इत्यस्मात् कारणादेव पद्यमित्युच्यते।

परंतु द्वितीयप्रकारके बंधेऽनियताक्षरनाम्ना प्रसिद्धे पद्यवत् न तावदक्षराणां प्रयुक्तानां संख्या नियता भवति, न चापि तेषां लघुत्वगुरुत्वविधानम्। सर्वथा स्वच्छंदोऽयं बन्ध:। लघ्वाकारोऽपि भवितुं शक्नोति (यथा चूर्णकगद्ये) दीर्घाकारोऽपि (यथा उत्कलिकाप्रायग-द्ये) अस्मिन् बंधे केवलमभिप्रायस्य प्रकटनमेव महीयते। अतएवाऽयं गद्यमित्युच्यते-गद् व्यक्तायां वाचि धातोर्यत् प्रत्यये कृते गद्यम्। गद्यते समुच्यत इति गद्यम्।

भरतस्य परवर्तिनावाचार्यौ भामहदण्डिनौ स्फुटरूपेण पद्यगद्यशब्दौ प्रयुक्त:। तयो: काव्यशास्त्रे चूर्णनिबद्धयो:, नियताक्षराऽनियताक्षरयोर्वा प्रयोगो नाऽवलोक्यते। द्वावपि पद्यगद्यसंज्ञामेव प्रयुक्त:। तद्यथाऽऽचार्यो दण्डी-

गद्यं पद्यंच मिश्रंच त्रिधा काव्यं व्यवस्थितम्। परवर्तिनस्सर्वेऽप्याचार्या: पद्यगद्यशब्दौ प्रयुंजन्ति तस्य भेदचतुष्टयं च समुदाहरन्ति। यथा-

गद्यं चतुर्विधं प्रोक्तं मुक्तकं वृत्तगंधि च।

ततश्चोत्कलिकाप्रायं चूर्णकंचान्तिमं मतम्।।

असमस्तपदं मुक्तं पद्यांशि वृत्तगन्धि च।

Scanned with CamScanner

मुक्तम् असमस्तपदं भवति। सरलसरलैः लघुवाक्यैरिदं लिख्यते। यथावलोक्यते कादम्बर्यां शुकनासोपदेशे, लक्ष्मीनिन्दायां वा। तद्यथा-

एवंवादिनो वचनमाक्षिप्य नरपतिरब्रवीत्-

अपनयतु नः कुतूहलम् आवेदयतु भवानादितः प्रभृति आस्तां तावत्सर्वम्।

कार्त्स्न्येनाऽत्मनो जन्म कस्मिन् देशे, भवान्कथं जातः ?

केन वा नाम कृतम् ? का ते माता ? कस्तेपिता ? कथं वेदाना-

मागमः ? कथं शास्त्राणां परिचयः ? कुतः कला आसादिताः ?

वृत्तगन्धि गद्यं पद्यांशि भवति। अर्थात् गद्यात्मकस्यापि तस्य बंधस्य कश्चिदंशः पद्यात्मको भवति। वृत्तस्य गंधस्तत्र परिलक्ष्यते। तद्यथा-खंडितानि दाडिमबीजानि नलिनीदलहरिन्ति द्राक्षा-इत्यत्र मात्रिकगीतगंधः वर्तत एव।

यथा वा-

समुपजातविस्यस्याभून्मनसिमहीपतेः।

अहो विधातुरस्थाने सौंदर्यनिष्पादनप्रयत्नः।।

इत्यात्राऽपि अनुष्टुप् गंधः परिलक्ष्यत एव।

उत्कलिकाप्रायं गद्यं भवति दीर्घसामासाढ्यम्।।

यथा हि-

तस्य च राज्ञः कलकालभयपुंजीभूतकृतयुगानु-

कारिणी त्रिभुवनप्रसवभूमिरिव विस्तीर्णा मज्जन्मा-

लवविलासिनीकुचतटास्फालनजर्जरितोर्मिमालया

Scanned with CamScanner

परंतु प्रक्तग्रंथेषु विशुद्धगद्यलेखनस्यापि प्रामाण्यमुपलभ्यते। तत्र महर्षिपतंजलिप्रणीते महाभाष्य एव भैमरथीति सुमनोत्तरेति च कथयोः समुल्लेखः समवाप्यते। इदमेव गद्याश्रितं रचनाद्वयं कालक्रमदृष्ट्या प्राचीनतमं मन्तव्यम्।

अपरतश्च दृश्यते शिलालेखीयगद्यपरंपराऽपि। सम्राजोऽशोकस्य 160 मिताः

Scanned with CamScanner

कायामपि कदाचिद्वक्ता नायकेतर एव जनो भवति। हर्षचरितेऽपि हर्षदेवो न तावद् वक्ता। वस्तुत: आचार्यदण्डी कथामाख्यायिकांच संकीर्णभेदामेकरूपांचैवाऽवगच्छति। तद्यथा-

अपि त्वनियमो दृष्टस्तत्राऽप्यन्यैरुदीरणात्।

अन्यो वक्ता स्वयं वेति कीदृग्वा भेदकारणम्।

तत्कथाख्यायिकेत्येका जाति: संज्ञाद्वयाकिंता।।

-काव्यादर्श: 2.26-28

गद्यसाहित्यस्य विपुलता-

भवतु नाम। गद्यवाड्.मयं न केवलं कथाख्यायिकयो: सीमितम्। सत्यमिदं प्रमाणयति स्वयमेव दण्डी-अत्रैवान्तर्भविष्यन्ति शेषाश्चाख्यानजातय: इति प्रोच्य। अनेनैव स्पष्टं जायते यद् दण्डियुगेऽपि कथाख्यायिकेतरा: काश्चन आख्यानजातय: (गद्यभेदा:) प्रचलिता आसन्। काश्चासन् ता आख्यानजातय इति जायत एवोत्कंठा। तत्र समुपलभ्यते प्रमाणमग्निपुराणे (336.18)

आख्यायिका कथा खंडकथा परिकथा तथा।

कथानिकेति मन्यन्ते गद्यकाव्यं च पंचधा।। अग्नि 337.12

आचार्यभोजदेव: श्रृंगारप्रकाशे गद्यस्य बहून् भेदान् परिगणयति। तद्यथा-आख्यायि-

Scanned with CamScanner

भोजानन्तरं काव्यानुशासनकार आचार्यहेमचन्द्रोऽपि गद्यकाव्यस्य द्वादशभेदान् गणयति-आख्यायिका, कथा, खंडकथा (इन्द्रमत्यादि) परिकथा (शूद्रककथादि) आख्यानम्, उपाख्यानम् (पंचतंत्रम्) प्रवह्लिका, मणिकुल्या, वृहत्कथा (नरवाहनदत्तकथा) सकलकथा (समरादित्य) उपकथा (चित्ररेखा) क्षुद्रकथा।

अत्र तावदाचार्यानन्दवर्धनस्यापि मतं ग्राह्यं प्रतीयते वस्तुतस्तन्मतमभिनवगुप्तसमर्थितं मतमिति विशेषः। ध्वन्यालोकस्य चतुर्थोद्योते ध्वनिकारः कथयति यद् विशिष्टकाव्यभेदाश्रयेणैव काव्यसंघटनाया वैशिष्ट्यं समायाति। इमे काव्यभेदा यथा पद्यस्य तथैव गद्यस्यापि भवितुं सम्भवन्ति। पद्यभेदाः सन्ति-मुक्तकम् सन्दानितकम्, विशेषकम्, कलापकम्, कुलकम्, पर्यायबंधश्च।

गद्यस्यापि भेदाः सन्ति-परिकथा, सकलकथा, खंडकथा, आख्यायिका, कथा चेति। सर्गबंधाऽभिनेयौ चाऽन्यौ। कथयति आनंदवर्धनः-

यतः काव्यस्य प्रभेदाः - मुक्तकं संस्कृतप्राकृताऽपभ्रंशनिबद्धम्। संदानितकविशेषककलापककुलकानि पर्यायबन्धः परिकथा सकलकथा खंडकथा सर्गबंधोऽभिनेयार्थ आख्यायिका कथेत्येवमादयः। तदाश्रयेणाऽपि संघटना विशेषवती भवतीति। - ध्वन्या.3.3 (वृत्तिः)

विस्तृतोऽयं प्रसंगोऽत्रैव परिहीयते। परंतु ध्वनिकारो मन्यते यत् काव्यभेदविशेषश्रयेणाऽपि कवेः प्रतिभा परां काष्ठामधिरोहति। गद्याश्रयेणैव बाणभट्टो वश्यवाणीचक्रवर्तितामवाप। चम्पूभेदसमाश्रयेणैव त्रिविक्रमभट्टोऽसाधारणोजातः। नाटकरचनयैव कालिदासोऽजरोऽमरो बभूव। मुक्तकसमाश्रयेणैवाऽप्रतिमो जातोऽमरुक इति। एवं हि कविप्रतिभाकाव्यभेदयोर्मध्येऽपि भवति कश्चिद् विलक्षण एव संबंधः।

परंतु आश्चर्यमिदं यदेतेऽग्निपुराणध्वनिकारभोजदेवहेमचन्द्रप्रोक्ताः गद्यभेदाः नाऽद्य समुपलभ्यन्ते। हेमचन्द्रस्तु स्वयुगोपलब्धान् गद्यग्रंथान् विविधान् नाम्ना समुदाहरत्यपि। तथापि नेदानीमवाप्यते कथाख्यायिकेतरा काऽपि गद्यकृतिः। तत्र किन्नु कारणम्? किं काव्यभेदास्ते प्रणष्टाः तुरुष्काक्रमणकारिभिः समाचरितैग्रन्थलयाग्निदाहैः? अन्यैर्वा कारणैस्ते नष्टाः?

भवतु। साम्प्रतिकं संस्कृतगद्यवाड्.मयं केवलमाख्यायिकाकथा-संवलितम्। तत्र कथायां प्राप्यन्ते-सुबन्धुप्रणीता वासवदत्ता, बाणभट्टप्रणीता, कादम्बरी, दण्डिप्रणीतं दशकुमारचरितम्, अवन्तिसुंदरीकथा च। सोड्ढलप्रणीता उदयसुंदरीकथा, धनपालप्रणीता तिलकमंजरीति। आख्यायिकाश्चापि वर्तन्ते-बाणभट्टप्रणीता हर्षचरितम्, वामनभट्टबाणकृतं वेमभूपालचरितम्, अम्बिकादत्तव्यासप्रणीतः शिवराजविजयः। एते तावत् प्रमुखा ग्रंथा अत्र नामभिरुल्लिखिताः। अन्यथा तेषां संख्या भूयसी परिलक्ष्यते।

Scanned with CamScanner

सैव पांचालीरीतिर्बाणभट्टेन स्वगद्यलेखनेषु प्रयुक्ता। तत्पूर्ववर्ती सुबंधुस्तु गद्यलेखने प्रत्यक्षरश्लेषपक्षधर आसीत्-

सरस्वतीदत्तवरप्रसादश्चक्रे सुबंधुस्सुजनैकबंधुः।

प्रत्यक्षरश्लेषमयप्रपंचविन्यासवैदग्ध्यधिया प्रबंधम्।।

बाणभट्टस्य परवर्ती दण्ड्यपि स्वगद्यादर्शं निश्चिन्नानोऽकथयत्-ओजस्समासभूयस्त्वमेतद्गद्यस्य जीवितम्।

बाणभट्टः स्वकीये गद्ये न प्रत्यक्षरश्लेषप्रपंचं वरयामास न चापि निरंतरमोजोगुणं समासभूयस्त्वमेव। स स खलु मध्यममार्गं चिन्नानोऽकथयत्-

Scanned with CamScanner

कीचकशताकुला........अपरिमितबहलपत्रसंचयापि सप्तपर्णोशोभिता, क्रूरसत्त्वाऽपि मुनिजनसेविता, पुष्पवत्यपि पवित्रा विन्ध्याटवी नाम।

अर्वाचीनं संस्कृतगद्यम्-

पृथ्वीराजपराजयानन्तरमेव (1192 ई) भारते सल्तनमसाम्राज्यं स्थापितं जातम्। आदौ गुलामवंशीयाः पश्चाच्च खिलजिनस्तुगलकाः लोदिनः सूरिणो मुगलाश्च क्रमेण भारतं शासितवन्तः। अस्मिन् शासने संस्कृतस्य वर्चस्वमपचितं पारसीकभाषाया वर्चस्-वंचोपचितम्। तथापि संस्कृतस्य रचनाधर्मिताऽक्षुण्णऽवतस्थे। शतसहस्रलक्षमिता ग्रंथाः प्रणीताः संस्कृतज्ञैः सल्तनतकालेऽपि। पारसीकभाषायाः प्रयोगः केवलं शासनकार्येष्वेव प्रावर्तत, न तावत्साहित्यसंरचनायाम्। परंतु 1756 मितख्रिस्ताब्दे, यदा नवाबसिराजुद्दौला प्लासीयुद्धे समुच्छिन्नो जातः, औगलानांच शासनं जातं बिहार-बंगालराज्ययोस्तदा स्थितिः परिवर्तिता जाता। प्रारंभे तावत् वारेन हेस्टिंग्ज-प्रयासैः संस्कृतस्य प्रतिष्ठा जाता, संस्-कृतभाषा राजभाषा घुष्टा। चार्ल्स विल्किन्समहोदयो हेस्टिंग्जप्रेरणयैव श्रीमद्भगवद्गीताया आंग्लभाषान्तरं विदधे। मधुसूदनर्कालंकारः वोलास्टन्नपणीतस्य आंग्लभाषाव्याकरणस्य

Scanned with CamScanner

गद्यैर्विद्योतितं यस्मात् गद्यकाव्यं तदीरितम्।

ग्रंथरूपम् तदेवात्र श्रव्यं किंचन्निरूप्यते।।

उपन्यासपदेनापि तदेव परिकल्प्यते।

यथा कादम्बरी यद्वा शिवराजजयो मम।।

अत्र तावत् व्यासमहोदयः कथामाख्यायिकामुपन्यासंचेति त्रितयमपि अभिन्नमेव मन्यते।

आंग्लभाषायां शार्टस्टोरी-लांगस्टोरी-स्टोरीनामभिः ख्याता ये गद्यभेदास्त एव संस्कृतभाषायां लघुकथादीर्घकथा-कथानिकासंज्ञाभिश्च प्रतिष्ठिता जाताः। अर्वाचीन-संस्कृतगद्यवाङ्मये एते सर्वेऽपि भेदाः सम्प्रति परिभाषिताः प्रतिष्ठिता, प्रयुक्ताश्च वर्तन्ते। एतेषा समेषां काव्यभेदानां लक्षणानि अभिराजयशोभूषणेऽभिनवकाव्यशास्त्रे समुपलभ्यन्ते।

अयं तावन्निष्कर्षः। साम्प्रतिकं गद्यं त्रिधा चतुर्धा वा व्यवस्थितं दृश्यते-

1. लघुकथा (एप्दीू एूदीब)

2. दीर्घकथा (थ्दहु एूदीब)

3. कथानिका (एूदीब/इग्मूदह)

4. उपन्यासः (प्राचीना कथा/आख्यायिका च)

लघुकथाविषये मिश्रोऽभिरराजराजेन्द्रः स्वोपज्ञलघुकथासंग्रहस्य चित्रपर्ण्याः भूमिकायां लिखति-

परंतु लघुकथायां वर्णितं वृत्तं विस्तृतं न भवति। तत्र पात्राणामनेकेषामपि प्रस्तुतिर्न दृश्यते। प्रायेण लघुकथा भवति एकपात्रपर्यवसायिवृत्ता। लघुकथा भवति विद्युदुन्मेष-कल्पाऽकस्मादेव निखिलपरिवेषप्रकाशयित्री। लघुकथा भवति मर्मोद्घाटनमात्रपर्यव-सायिनी। कामं लघुकथायाः कलेबरं कदाचित् पृष्ठमितं स्यात् पृष्ठद्वयमितं वा। परंतु मूललघुकथा तु एकवाक्यमितैव भवति।

पुनश्च कथानिकायां भवन्ति अनेकपात्राणि। तेषां समवेतवृत्तवर्णनमेव कथाया विस्तारं सृजति। परंतु लघुकथायामेकपात्रतानिर्वहणनिवार्यमिति मन्मतम्। मनोभावस्य

Scanned with CamScanner

नूनं लघुकथेयं स्यादेकपात्रावसायिनी।।

अकस्माद्धि परीहारश्चिरसंस्तुतवत्र्मनः।

असंस्तुतसरणेश्चाऽप्यंगीकारो ह्यतर्कितम्।।

सुग्रहणमग्राह्यस्य गृहीतस्याप्युपेक्षणम्।।

कस्यचन संकलपस्य झटित्येव समुद्भवः।।

भावोन्मेषो विवर्तो वा भावानां समयोचितः।

चिरुरूढमनोभावस्यापि द्राक्परिवर्तनम्।।

उल्कापिण्डसदृक्षाभा हृत्तन्त्रीझङ्.कृतिक्षमा।

अल्पाक्षराऽल्पपात्रापि कथा लघ्वी महीयते।।

-अभिराजयशो. 4.113-116

अर्वाचीनसंस्कृते विशुद्धलघुकथानां संकलनानि प्रायशो नगण्यान्येव वर्तन्ते। प्रायेण कथाकारा लघुकथास्वरूपविषये संदिग्धमानसा एव वर्तन्ते। ते प्रणयनित कथानिकाम्। परंतु संबोधयन्ति तां लघुकथाम्। एतत्खलु भाषान्तरतुल्यवाङ्.मयाऽनध्ययनस्य दुष्फलम्-्। लघुकथा हिन्द्यां भूयस्त्वेन लिख्यन्ते परंतु ताश्चैव न जातु पठ्यन्ते संस्कृतकथाकारैः। तत एवेयं सर्जनाविषयिणी भ्रान्तिः। दिल्लीसंस्कृताकादम्या लघुकथासंग्रहः कश्चित्प्र-काशितो यस्मिन्नैकाऽपि कथा लघुकथा। सर्वाः कथानिका एव वर्तन्ते।

हिंदीकहानीशब्दः संस्कृतकथानिकाया एव तत्समरूपमित्यत्र न कश्चन संदेहः। वस्तुत आंग्लभाषाभिमता कथैव स्टोरीपदवाच्या, हिन्द्यामपि लोकप्रिया सम्प्रति संस्कृतेऽपि तद्वदेव प्रचलिता वर्तते। अत्र कथानिकाया षड्बिन्दवः प्राधान्यं भजन्ते, तद्यथा-कथावस्तु, पात्रं पात्रचरित्रचित्रणंच, संवादः (कथनोपकथनम्) वातावरणम्, भाषाशैली, उद्देश्यंच।

कथानिकां लक्षयति आचार्यो राधावल्लभस्त्रिपाठी-जीवनस्यैकदेशनिरुपणपर-माख्यानं कथा (अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम् 3.1.12)

मिश्रोऽभिराजराजेन्द्रः विस्तृततरं लक्षयति-

प्रतिष्ठाधुरमध्यास्ते कथाभेदो हि कश्चन।

अभीष्टा सर्वभाषासु प्रोच्यते सा कथानिका।।

Scanned with CamScanner

क्षमारावमहोदया पुष्कलं कथासाहित्यं प्रणीतवती। आधुनिककथाकारेषु महीयन्तेऽभि-राजराजेन्द्रराधावल्लभत्रिपाठि-प्रभुनाथद्विवेदी-वीणापाणिपाटनी-प्रमोदभारतीय-प्रशस्मित्र-शास्त्रि-देवर्षिकलानाथशास्त्रि-वनमालीविश्वाल-अशोकपुरनाट्टुकरप्रभृतयः कथाकाराः।

इक्षुगन्धा-रांगडा-चित्रपर्णी-पुनर्नवा-छिन्नमस्ता-अभिनवपंचतन्त्रम्-कान्तारकथेति सप्त कथासंकलनानि प्रकाशितानि राजेन्द्रमिश्रस्य। तत्रेक्षुगन्धा साहित्याकादमीपुरस्कृता (1988) कथाकृतिः यस्या बंगभाषासंस्करणमपि प्रकाशितं जातम्। कथासु एतासु साम्प्रतिकभारतीयसमाजसमस्याः समुत्थापिताः समाहिताश्च। तत्र यौतुकसमस्या, विषमोद्वाहसमस्या, बहुकन्याजन्मसमस्या, विधवाविवाहसमस्या, दाम्पत्यनिष्ठासमस्या महीयन्ते।

शिल्पदृष्ट्याऽपि संस्कृतकथा महीयन्ते। क्वचित्तावत् पूर्वोन्मेष पद्धतिः प्रभवति,

Scanned with CamScanner

परंतु साहित्यिकं गद्यं प्रारभ्यते शिलालेखैरशोकस्य। यद्यपि तेषां शिलालेखानां भाषा पाली वर्तते, परंतु खारवेलस्य लेखे प्राकृतस्यप्रयोगो वर्तते, समुद्रगुप्तस्य च शिलालेखे संस्कृतस्य प्रयोगो वर्तते। तदनन्तरमेव समायाति कालः स्वतंत्रसाहित्यिकगद्यप्रयोगस्य। महाकविः सुबंधुर्वासवदत्तां लिलेख, दण्डी दशकुमारचरितम् अवन्तिसुंदरीकथां च प्रणिनाय। महाकविर्बाणभट्टश्चापि कादम्बरीं हर्षचरितंच प्रणीतवान्।

संस्कृतगद्यमतीव समृद्धं वर्तते शैलीदृष्ट्या। तद्धि चतुर्विधं वर्तते-उत्कलिकाप्रायम्, वृत्तगंधि, चूर्णकं, मुक्तकंच। तत्र तावत् उत्कलिकाप्रायं गद्यमेवाऽतीव जटिलं कठिनंच प्रतीयते समासभूयस्त्वात् दैर्घ्याच्च। अस्य गद्यस्य एकैकं वाक्यं पृष्ठपरिमितमपि भवितुं शक्नोति। तद्यथा कादम्बर्याम्-

तस्य च दृढमुष्टिनिष्पीडननिष्ठ्यूतधाराजलबिन्दुदन्तुरेण कृपाणेनाकृष्यमाणा सुभटोरः

Scanned with CamScanner

ठचमत्कृत्य पुनाति सहृदयान् [illegible]
पद्ययोः युक्ता काव्यस्य चम्पू इत्याख्या विशिष्टाशैली, या पाठकानां हृदये चमत्कारम् उत्पाद्य विस्मियेन सह पवित्रताम् उत्पादयति ।

द्वादशशताब्दस्य जैनमतानुयायी हेमचन्द्राचार्याख्यः काव्यविद् स्वस्य काव्यानुशासनाख्ये ग्रन्थे उदलिखत् यत्, अङ्कः तथा उच्छवासः च चम्प्वाः अभिन्नाङ्गे स्तः इति । परन्तु कतिपयेषु चम्पूकाव्येषु अङ्कोच्छवासयोः अपेक्षया विभाजकत्वेन अध्यायस्य उपयोगः प्राप्यते । अतः एतावता चम्पूकाव्यस्य कापि स्थिरपरिभाषा न प्राप्यते ।

" गद्यपद्यमयं श्रव्यं, सम्बन्धं बहुवर्णितम् । सालङ्कतैः रसैः सिक्तं चम्पूकाव्यमुदाहृतम् ।।"

अर्थात् गद्यपद्यमिश्रितं, श्रव्यं, वर्णनप्रधानम्, अलङ्कारबहुलं, सरसं, प्रबन्धकाव्यम् एव चम्पूकाव्यत्वेन परिगण्यते । पञ्चतन्त्रसदृशाः रचनाः गद्यपद्यमये सत्यपि चम्पूकाव्यत्वेन न परिगण्यते । यतो हि तादृश्यः रचनाः प्रबन्धकाव्येषु न, अपि तु मुक्तकाव्येषु अन्तर्भवन्ति ।

चम्पूकाव्यस्य इतिहासः

गद्यपद्यमिश्रितानां काव्यानां रचना तु वैदिककाले एव आरब्धा आसीत् । कृष्णयजुर्वेदस्य तैतरीयसंहिता, मैत्रायणीसंहिता, कठसंहिता च चम्पूशैल्याः उत्तमानि उदाहरणानि सन्ति । ऐतरेयब्राह्मणस्य त्रयस्त्रिंशत्तमे (३३) अध्याये उल्लिखितः हरिश्चन्द्रोपाख्यानः मिश्रशैल्यां रचितः अस्ति । उदा. हरिश्चन्द्रो ह वैधस, ऐक्ष्वाको राजाऽपुत्र आस । तस्य शतं जाया बभूवुः । तासु पुत्रं न लेभे । तस्य ह पर्वतनारदौ गृहम् ऊषतुः । स ह नारदं पप्रच्छ इति ।

उपनिषत्सु पश्नोपनिषद्, मुण्डकोपनिषद्, कठोपनिषद् च मिश्रशैल्या एव उपस्थापिताः सन्ति ।

" ॐ उशन् ह वै वाजश्रवसः सर्ववेदसं ददौ । तस्य ह नचिकेता नाम पुत्र आस ।। १/१/१ ।। कठोपनिषद्"

Scanned with CamScanner

अभवत् । ततः रचितानि चम्पूकाव्यानि अद्यापि उपलभ्यन्ते । यतो हि त्रिविक्रमभट्टस्य नलचम्प्वः अनन्तरं चम्पूकाव्यरचनायां वेगः अवर्धत । अतः त्रिविक्रमभट्टादेव चम्पूकाव्यानां विधिवत् आरम्भः अभवत् इति इतिहासविदां मतम् ड१.।

चम्पूकाव्यानां कालाधारितः विभागः

कालक्रमानुसारं चम्पूकाव्यानि चतुर्षु भागेषु विभज्यन्ते ।

१. दशमाब्दात् पञ्चदशमाब्दपर्यन्तम्

२. षोडशमाब्दात् सप्तदशमाब्दपर्यन्तम्

३. सप्तदशमाब्दस्य उत्तरार्धात् अष्टमाब्दपर्यन्तम्

४. एकोनविंशतितमाब्दात् वर्तमानकालपर्यन्तम्

चम्पूकाव्यस्य प्रकाराणि

१. नीत्युपदेशात्मकं चम्पूकाव्यम्

२. पौराणिकं चम्पूकाव्यम्

३. दृश्यकाव्यात्मकं चम्पूकाव्यम्

चम्पूकाव्यानि

Scanned with CamScanner

प्रसिद्धमेव यदसौ विक्रमपूर्वकालेऽपि लब्धप्रचार आसीत् इति। प्रथमम् अस्य रूपं स्मरति आद्यकाव्यशास्त्राचार्यो भामहः । ततश्च रुद्रदाम्नो गिरिनाराभिलेखेऽनेकेषु गुप्तकालीनाभिलेखेषु चास्य स्वरूपमुच्यते । दण्डी तु - 'गद्यपद्यमयी काचिच्चम्पूरित्यभिधीयते' इति नामत एव स्मरति काव्यभेदमिमम् । तथापि चम्पूकाव्यस्य स्वतन्त्रग्रन्थरूपेण त्रिविक्रमभट्टस्य नलचम्पूरेव प्रथममुदेति । ततश्च सोमप्रभसूरेः यशस्तिलकचम्पूः, हरिश्चचन्द्रस्य जीवन्धरचम्पूः, भोजस्य रामायणचम्पूश्च केचन प्राचीनाश्चम्पूग्रन्थाः।

एवमेव भागवतं महाभारतञ्चाश्रित्याऽप्यनेके चम्पूग्रन्थाः प्रणीताः सन्ति। एवमेव वरदाम्बिकापरिणयचम्पूः, नीलकण्ठविजयचम्पूः, विश्वगुणादर्शचम्पूः, मुक्ताचरित्रचम्पूः, आनन्दवृन्दावनचम्पूः, गोपालचम्पूः, आनन्दकन्दचम्पूः, चितचम्पूः, अवन्तिसुन्दरीकथाचम्पूः, पारिजातहरणचम्पूः, उषापरिणयचम्पूः, गजेन्द्र चम्पूः, भरतेश्वराभ्युदयचम्पूः, पुरुदेवचम्पूः, अमोघराघवचम्पूः, यतिराजविजयचम्पूः, विरूपाक्षवसन्तोत्सवचम्पूः, रुक्मिणीपरिणयचम्पूः, आचार्यविजयचम्पूः, वेङ्कटेशचम्पूः, धर्मविजयचम्पूः, शङ्करचेतविलासचम्पूः, गङ्गावतरणचम्पूः, रामचन्द्रचम्पूः, आनन्दचम्पूः, सुदर्शनचम्पूः, सिन्देविजयविलासचम्पूः, द्रौपदीपरिणयचम्पूः, नवरत्नावली चैवमाद्याः सन्ति प्रकाशिता अप्रकाशिताश्च सार्धद्विशताधिकाश्चैम्पूग्रन्थाः ।

नलचम्पूः

अद्यावधि ज्ञातेषु चम्पूकाव्येषु त्रिविक्रमभट्टस्य नलचम्पूरेव प्रथमत्वेन गृह्यते । त्रिविक्रमः शाण्डिल्यगोत्रस्य श्रीधराऽऽख्यस्य पौत्रो देवादित्यस्य पुत्रः ९७२ मितवैक्रमाब्दमभितः स्थितिमान् । सः बाणभट्टं स्मरति-

Scanned with CamScanner

। तेन अयमेव कालस्त्रिविक्रमस्य पूर्वसीमा स्थितिकालस्य । एवमेव विक्रमैकादश-शतकोत्तरार्द्धभवो भोजो नलचम्पूं स्मरतीतीयमेव तस्य स्थितिकालस्यावरसीमा। तथैव सः राष्ट्रकूटवंशीयस्य तृतीयेन्द्रराजस्य समये आसीदिति उल्लेखः प्राप्यते -

श्रीत्रिविक्रमभट्टेन नेमादित्यस्य सूनुना।

कृता शस्ता प्रशस्तेयमिन्द्रराजाङ्घ्रिसेविना ।।इति।

कथनमिदं ९७२ मितवैक्रमाब्दे समुट्टङ्कितालेखे विद्यते । तेन ९७२ मितवैक्रमाब्दमभितस्तस्य स्थितिकाल इति । केचित्तु -

कैलाशायितमद्रिभिर्विटपिभिः श्वेतातपत्रायितं

मृत्पङ्केन दधीयितं जलनिधौ दुग्धायितं वारिभिः।

मुक्ताहारलतायितं व्रततिभिः शङ्खायितं श्रीफलैः

श्वेतद्वीपजनायितं जनपदैर्जाते शशाङ्कोदये।।

एवमेव -

मदनमिति युवानं यौवराज्येऽभिषिञ्चन्

कृतकुमुदविकासो भासयन् दिङ्मुखानि ।

इमममृततरङ्गैः प्लावयञ्जीवलोकं

गगनमवजगाहे मन्दमन्दं मृगाङ्कः।।

इति कथनेन श्लेषबलात्कमपि शशाङ्कसंज्ञितं नृपं स्मरतीति तर्कयति। तदनुसारेण कवेरस्य शशाङ्कसमकालिकत्वं मन्यते । शशाङ्को वै हर्षसमकालिकस्तत्प्रतिद्वन्द्वी गौडनरेशो वैक्रमसप्तमशतकोत्तरार्द्धस्थितिमान् । किन्तु कथनमिदं न तथा युक्तियुक्तं यतस्तथा सति तस्य बाणपूर्ववर्तित्वं मन्यते यद्धि तस्यैव 'शश्वबाणद्वितीयेन नर्मदाकार धारिणा इति कथनस्य विरोधः सञ्जायते ।श्रीहर्षेण शशाङ्कवधानन्तरमेव बाणस्तत्सभायां प्रविष्ट आसीत् ।

नलचम्पूः दमयन्तीकथाप्युच्यते । ग्रन्थोऽयं सप्तोच्छ्वासेषु विभक्तोऽस्ति यत्र आर्यावर्तवर्णनमारभ्य नलदमयन्तीपरिणयपर्यन्ता कथा वर्णिताऽस्ति । कथ्यते एकदाऽस्य पिता कार्यवशाद्दूरदेशं गतः आसीत् । तदैव कश्चिदपरः पण्डितस्तं तत्रागत्य शास्त्रार्थाय समाहूतवान् । स तु भीतभीतः सरस्वतीमस्तौषीत् । साऽपि तत्पितृप्रत्यागमनपर्यन्तं तज्जिह्वावासं स्वीकृतवती । ततः शास्त्रार्थे तं पण्डितं पराजित्य गृहं प्रत्यागत्य ग्रन्थमिमं लिखितुमारब्धवान् । एतदन्तरे तत्पिता प्रत्यागतो गृहम् । ततो भारती तं त्यक्तवती येन

Scanned with CamScanner

ग्रन्थेऽस्मिन्नर्थालङ्कारापेक्षया शब्दालङ्कारस्यैव प्राधान्यं दृश्यते । तथाऽप्यस्य सरसा रमणीयार्था चमत्कारपूर्णा च । यथोक्तम् -

प्रसन्नाः कान्तिहारिण्यो नानाश्लेषविलक्षणाः ।

भवन्ति कस्यचित्पुण्यैर्मुखे वाचो गृहे स्त्रियः ।।

वस्तुतस्तु तस्य कृतिरपि सदूषणाऽपि निर्दोषा सखराऽपि सुकोमला विद्यते रामायण कथेव। श्लेषस्य दुर्बोधत्वं स्वीकुर्वन् कविः स्वयमेव कथयति -

वाचः काठिन्यमायान्ति भङ्गश्लेषविशेषतः।

नोद्वेगस्तत्र कर्तव्यो यस्मान्नैको रसः कवेः ।। इति ।

अस्य यमकच्छटा निभालनीया दृश्यते यथा -

धृतकदम्बकदम्बकनिष्पतन्नवपरागपरागममन्थराः।

हृततुषारतुषाररतिरागिणां प्रियतमा मरुतो मरुतो वधूः।।इत्यादि ।

स हि भावनिबन्धनेऽपि पटुर्दृश्यते । भर्तृहरेः -

व्यतिसजति पदार्थानन्तरः कोऽपि हेतुर्न खलु बहिरुपाधी प्रीतयः संश्रयन्ते ।

Scanned with CamScanner

हरिचन्द्राख्यः कश्चिज्जैनजीवन्धराख्यस्य मुनेश्चरितमाश्रित्य जीवन्धरनामकचम्पूग्रन्थं प्रणीतवान् । ग्रन्थोऽयं गुणभद्रेण ९०७ मितवैक्रमाब्दमभितः सङ्कलितमुत्तरपुराणमुपजीवति । तेनास्य प्रणयनकालो वैक्रमदशमशतकोत्तरार्द्धमभितोऽनुमितः । एवन्तु स्पष्टमेव यदसौ भट्टारहरिचन्द्राद्, यं बाणभट्टोऽपि सादरं स्मरति, भिन्न एव किन्तु सम्प्रत्यपि नैतत्स्पष्टं यदसौ हि शर्मधर्माभ्युदयकाव्यस्य प्रणेता एव वा तद्भिन्न इति । असौ माघे बाणभट्टञ्च सुस्पष्टमेवानुकरोति भावभाषादिकमधिकृत्य ।

यशस्सिलकचम्पूः

Scanned with CamScanner

’भोजेन दूतो राघवे विसृष्ट’ इति रघुवंशेऽपि । धारानगरीशः परमारवंशीयः सिन्धुराज-पुत्रोऽपि भोजशब्देन व्यपदिश्यते । भारतीया परम्परा धारानगरीशभोजमेव ग्रन्थस्यास्य प्रणेतृत्वेन गृह्णाति । अपरञ्च, भोजप्रबन्धादावपि स एव विद्वन्मूर्धन्यत्वेन गृहीतोऽस्ति । सम्भवति कोऽपि लिपिकारः भोजं हि वैदर्भं मत्वा तथाविधं पुष्पिकावाक्यं पश्चात्संयोजितं स्यात् । ग्रन्थगौरवदृष्ट्या त्वयं ग्रन्थो धारानरेशस्यैव भवितुमर्हति । गन्थस्यास्य सद्यः पञ्च काण्डानि भोजप्रणीतानि युद्धकाण्डे तु लक्ष्मणभट्टनाम्ना विदुषा प्रणीय पूरितम् । तथैव वेङ्कटराजाख्येन कविना उत्तरकाण्डमपि विरच्य पूरितमिति कथ्यते ।

ग्रन्थेऽस्मिन् वैदर्भीरीति सर्वातिशयित्वेन विलसति । वर्णनेऽत्र प्रयुक्ता कल्पना नितान्तोच्चकोटिका । अत्र अनुप्रासयोपमायाश्च वैचित्र्यं कुमारदासं स्मारयति । अस्योत्प्रेक्षाऽपि निभालनीया। दिङ्मात्रमुदाहरणं यथा -

Scanned with CamScanner

राज-कोङ्कणनरेश-वत्सराज-प्रभृतयोऽपि स्मृतास्तथैव लाटमहीपश्चालुक्य आश्रयदातृत्वे-नाल्लिखितः । यथा हि -

'वागीश्वरं हन्त भजेऽभिनन्दमर्थेश्वरं वाक्पतिराजमीडे।

रसेश्वरं स्तौमि च कालिदासं बाणं तु सर्वेश्वरमानतोऽपि।।'

'बाणस्य हर्षचरिते निशितामुदीक्ष्य।

शक्तिं न केऽत्र कवितास्त्वमदं त्यजन्ति।।'

सोड्ढलः पदे पदे बाणमनुसरति । तथाप्यस्य शैली मौलिकी सरसा च विद्यते । असौ क्षक्-झम्पप्रभृतिनितान्ताप्रचलितान् शब्दान् अपि प्रयुनक्ति। ग्रन्थस्य प्रथमाध्याये कवेरात्मकथा दत्तास्ति ।

कीतिकौमुदी

१२९७ मितवैक्रमाब्दमभितः स्थितिमतः सोमेश्वरदेवस्य कीर्तिकौमुदी अपि

Scanned with CamScanner

सरसशैल्यां प्रणीतेऽस्मिन् ग्रन्थे विशिष्टाद्वैतमतप्रवर्तकस्य रामानुजस्य जीवनचरितं वर्णितमस्ति । अस्य प्रणयनकालः १६६० मितवैक्रमाब्दमभितोऽनुमितः ।

वरदाम्बिकापरिणयचम्पूः

तिरुमलाम्बायाः वरदाम्बिकापरिणयचम्पूश्चम्पूकाव्येषु भावभाषादिदृष्ट्या नृपायते । अत्र हि अच्युतरायस्य वरदाम्बिकायाश्च प्रणयपरिणयौ मनोहारिण्या शैल्या वर्णितौ स्तः।

कवीयत्र्यसौ १५८६ मितवैक्रमाब्देऽभिषिक्तस्य राज्ञोऽच्युतरायस्यैव धर्मपत्न्यासीत् । अतोऽस्याः स्थितिकालः १५१०-१५५० मितवैक्रमाब्दानभितोऽनुमितः । ग्रन्थोऽयं भङ्गश्लेषेऽसाधारणः । निभाल्यतामस्य वर्णनासौष्ठवम् -

तदनु धरणिपालो धावता चेतसाऽग्रे सरभसमिव कृष्टः सरभगौर्याः प्रविश्य।

तडित इव घनौघे तत्र तत्र स्फुरन्तीः परित इह पुरन्ध्रीः पर्यटन्तीरपश्यत्।।

एवमेव नारायणभट्टेन (१६६० वै०) द्रौपदीस्वयंवरकथामधिकृत्य पाञ्चालीस्वयंवरचम्पूः श्लेषजालमुक्ता दृश्यते । समरपुङ्गप्रणीते यात्राबन्धे नवाश्वासाः सन्ति । अत्र सर्वाण्यपि तीर्थानि वर्णितानि सन्ति मुख्यानि । ग्रन्थोऽयं १६८० मितवैक्रमाब्दमभितः प्रणीतोऽनुमीयते । १६८० मितवैक्रमाब्दमभितः स्थितिमता मित्रमिश्रेण भङ्गश्लेषमाधृत्य

Scanned with CamScanner

तत्सुतस्तर्कवेदान्ततन्त्रव्याकृतिचिन्तकः।

व्यक्तं विश्वगुणादर्शं विधत्ते वेङ्कटाध्वरी।। ३ ।।

अनेनैतत् मन्यते यदसौ अप्पयदीक्षितस्य पौत्र आसीदिति । तेनाऽस्य समयः १७०७ मितवैक्रमाब्दमभितो मतः । स कथयति -

पद्यं यद्यपि विद्यते बहुसतां हृद्यं विगद्यं न तद्

गद्यं च प्रतिपद्यते न विजहत्पद्यं बुधास्वाद्यताम्।

आदत्ते हि तयोः प्रयोग उभयोरामोदभूमोदयं

सङ्गः कस्य हि न स्वदेत मनसे माध्वीकमृद्वीकयोः।।४।।

ग्रन्थस्य कथावस्तु पृष्ठभूमिश्चेत्थम् -

विश्वावलोकस्पृहया कदाचिद्विमानमारुह्य समानवेषम्।

कृशानुविश्वावसुनामधेयं गन्धर्वयुग्मं गगने चचार।। ५ ।।

तौ हि क्रमशः सूर्यलोक-भूलोके, भूलोके अयोध्या-गङ्गानदी-काशीसमुद्र-जगन्नाथक्षेत्र-गुर्जरदेश- यमुनानदी-महाराष्ट्र-आन्ध्रप्रदेश-कर्णाटकदेश-वेङ्कटगिरि-वन-घटिकाचल-दीक्षारण्य-रामानुज-चन्नपट्टण(मद्रास)-काञ्ची-श्रीमद्वेदान्तदेशिकाचार्य-कामासिकानगरवासि-नृसिंह-त्रिविक्रम-कामाक्षीदेवी-एकाम्रेश्वर-क्षीरनदी-वाहानदी-तुण्डीरमण्डल-चञ्जीपुरी-यज्ञवराह-कावेरी-रङ्गनगरी-जम्बूकेश्वर-चोलदेश-शार्गपाणि-राजगोपाल-सेतु-ताम्रपर्णी-शठकोपमुनि-वेदान्ति-ज्योतिषिक-भिषक्कवि-तार्किक-मीमांसक-वैयाकरण-वैदिक-राजसेवक-दिव्यक्षेत्र-प्रभृतीनां वर्णनं सुनिपुणं कृतमस्ति । कविवर्णनं यथा -

माघश्चौरो मयूरो मुररिपुरपरो भारविः सारविद्यः

श्रीहर्षः कालिदासः कविरथ भवभूत्याह्वयो भोजराजः ।

श्रीदण्डी डिण्डिमाख्यः श्रुतिमुकुटगुरुर्भल्लटो भट्टबाणः

Scanned with CamScanner

स्योत्तरकाण्डगता कथोपवणताऽस्ति ।श्रीनिवासचम्प्वादशीध्यायाः सन्ति यत्र तिरुमलयस्थितदेवतानां वर्णनं दृश्यते । एवमेव बाणेश्वरस्य चित्तचम्पूग्रन्थे रोज्ञश्चित्रसेनस्य जीवनं चित्रितमस्ति यो हि १८०१ मितवैक्रमाब्दे मृतः। कवेरस्य समयो वैकमैकोनविंशतिशतवपूर्वार्द्धमभितः ।अस्य स्थितिक सम्प्रत्यपि नैवं निर्णीतः। द्वितीयसर्कोजोतिख्यातस्य तञ्जोरनृपस्य कुमारसम्भवचम्पूः (१८७५ वै०)।

अज्ञातकर्तृका सर्वदेवविलासचम्पूर्मद्रदेशस्य तात्कालिकॉमवस्था-वर्णयति । षडाश्वासात्मकोऽयं ग्रन्थोऽपूर्ण एवं दृश्यते ।वर्तमानकाले शिवप्रसादद्विवेदिनी, नवरत्नावलीयमितिः चैम्पूग्रन्थः प्रणीतोऽस्ति ।अत्रं रवनत्नानि सन्ति ।तुलसीदासजीवनसम्बद्धकथाऽत्रं वणता ।ग्रन्थोऽयं २०४० मितवैक्रमाब्दे प्रकाशितः ।इत्थं हि रामायणश्रिताः, महाभारताश्रिताः, भगवताश्रितश्चे संम्त्यनेकै शताधिकांश्चम्पू ग्रन्थाः येषां विवरणमंत्र विस्तरंभिया नवोपस्थाप्यते । भगवती तिचम्पूषु चिदम्बरस्य, रामभद्रस्य, राजनाथस्य च भागवतचम्पूः, केशव भट्टस्य नृसिंहचम्पूः, दैवज्ञसूर्यस्यं नृसिंहचम्पूः, संङ्कर्षणस्य नृसिंहचम्पूः शेषसंस्कृतसाहित्येतिहासः कृष्णस्य पारिजीतहरणञ्च ।मैहाभारताश्रितचम्पूषु अनन्तभट्टस्य भारतचम्पूः प्रसिद्धी ।। - संस्कृतजगति प्रसिद्धाश्चम्पूकारा यथा कालक्रमानुसारेण 'त्रिविक्रमश्च सोमश्च हरिचन्द्रस्तथैव च ।भोजश्च सोड्ढलश्चैव राज्ञी तिरुमलाह्वया ।।नारायणस्तथा चीसन वेङ्कटाध्वरिसूरयः ।शेरोऽपि चे विख्याताश्चम्पूकाव्यविधायकाः ।।' इति ।

गीतकाव्यं

गीतकाव्यं संस्कृतसाहित्यस्य नितरां रमणीयः प्रकारः वर्तते । इदं मुक्तकरूपेण प्रबन्धरूपेण च उपलभ्यते । अनेन प्रकारेण रमणीनां रूपहृदययोः सुन्दरं चित्रणं कृतं दृश्यते ।अस्मिन् शृङ्गाररसस्य विभिन्नाः अवस्थाः मार्मिकरूपेण वर्णिताः दृश्यन्ते ।एतेन नारीप्रेम्णः उदात्तता विशुद्धता च ज्ञाता भवति । प्रकृतिवर्णनम् अपि अत्र प्रमुखं स्थानम् आवहति । प्राकृतिकसौन्दर्यम् आन्तरिकसौन्दर्यस्य अनावरणाय कल्प्यते । सङ्गीतसयोजनम् अस्य प्रकारस्य वैशिष्ट्यं वर्तते । नृत्ययोजनस्य साध्यताः अपि अत्र विद्यन्ते । सङ्गीतमपि साहित्यञ्च सरस्वत्या स्तनद्वयम् इत्येषा उक्तिः प्रसिद्धा । एतेषु गीतकाव्येषु सङ्गीतसाहित्यानां समागमः दृश्यते । अत्रत्यं सङ्गीतं भवति आपातमधुरम् । साहित्यं भवति आवलोचनामृतम् । अतः एव जनसामान्यैः अपि अयं प्रकारः आनन्ददायकः भवति । अत्रत्य प्रेम लौकिकप्रेमपरिधिम् अतिरिच्य भक्तिभावं प्रति प्रवहति । अस्य

Scanned with CamScanner

ास्सु माधुर्यभावं जनयन्त्येव । तत्रापि जयदेवस्य शब्दरचनोति दुग्धशर्करायोगोऽयं संजातः ! गीतगोविन्दस्यानुवादाः प्रायः सर्वासु भारतीयभाषासु जाताः । आङ्ग्ल-लेटिन-जर्मनभ-ाषास्वपि तस्यानुवादा अभवन् । जयदेवस्य जन्म १२तमे शतके वङ्गप्रान्ते केन्दुलाख्ये ग्रामेऽभवत् । दुर्दैववशाद्बाल्ये एव तस्य मातापितरौ दिवङ्गतौ । जयदेवो जगन्नाथपुरीमागत्य न्यवसत् । कतिपयदिवसानन्तरं स तीर्थयात्रायै प्रस्थितः । ततोऽनन्तरं तस्य विवाहः सम्पन्नः । पत्न्या सह भ्रमन् स गीतगोविन्दं व्यरचयत् । इतोऽपि तस्य दुर्दैवं न समाप्तम् । यौवने एव तस्य भार्या मृता । अतीव खिन्नः स यशोदानन्दनस्य शिष्यत्वमङ्गीकृतवान् । मृत्योः पूर्वं स स्वग्रामं प्राप्तः । तत्रैव कतिपयदिवसानन्तरं तस्य देहान्तोऽभवत् । अस्मिन्ग्रामे तस्य समाधिस्थानं पूज्यते । तत्र प्रतिवर्षं मकरसङ्क्रान्तिदिने यात्रा भवति ।

परिचयः संस्कृतसाहित्यशृङ्गारगेयकाव्यस्य रचयिता जयदेवः । नादभावयोः माधुर्यार्थं प्रसिद्धस्य जगद्विख्यातस्य गीतगोविन्दकाव्यस्य कर्ता अस्ति अयम् । अस्य माता रामादेवी, पिता च श्रीभोजदेवः । इमम् अंशं सः स्वस्य २४ तमे गीते प्रकाशयति -

श्री भोजदेवप्रभवस्य रामादेवीसुतश्रीजयदेवकस्य ।

पराशरादिप्रियवर्गकण्ठे श्रीगीतगोविन्दकवित्वमस्तु ।।

जयदेवस्य भार्या भवति पद्मावती । स्वयं जयदेवः पद्मावतीचारणचक्रवर्ती इति वाग्देवताचरितचित्रितचित्तसद्मा इति च गीतगोविन्दे कथयामास ।

जन्मस्थानम्

Scanned with CamScanner

राजस्य सभामन्दिरस्य द्वारशिलापटे उल्लिखितश्लोकोऽयम् अत्र प्रमाणम् । यथा -

गोवर्धनश्च शरणो जयदेव उमापतिः ।

कविराजश्च रत्नानि समितौ लक्ष्मणस्य च ।।

जीवनम्

बाल्यकालतः मथुरा-बृन्दावनादिषु पुण्यस्थलेषु अटतः तस्य मनसि राधामाधवयोः कथायाः महान् प्रभावः जातः । जगन्नाथपुर्यां तस्य जीवनस्य महत्त्वपूर्णप्रसङ्गः जातः । तस्मिन् स्थले स्थितस्य कस्यचित् ब्राह्मणस्य पुत्री पद्मावती जगन्नाथप्रभोः अनुग्रहात् प्राप्ता आसीत् । तस्य ब्राह्मणस्य स्वप्ने कदाचित् जगन्नाथेन सूचितं यत् पुत्री वृक्षस्य अधः सुप्तवते जयदेवाय दातव्या इति । नेच्छन् अपि सः ब्राह्मणः स्वपुत्रीं जयदेवाय अयच्छत् । गत्यन्तरेण विना जयदेवेन सा परिणीता । उभयोः गुणशीलेषु सामञ्जस्यम् आसीत् इत्यतः तयोः दाम्पत्यं सुखमयं जातम् ।

वाग्देवताचरितचित्रितचित्तसद्मा

पद्मावती चरणचारणचक्रवर्ती ।

श्रीवासुदेवरतिकेलिकथासमेतं

एतं करोति जयदेवकविः प्रबन्धम् ।।

यत्र तेन गीतगोविन्दकाव्यं रचितं सः ग्रामः जयदेवपुरमिति ख्यातं जातम् । तेन रचितम् इदं काव्यं लोकमान्यं जातम् । बहवः तदीयशिष्याः जाताः । सः क्रि श १ २ ० ० तमे वर्षे दिवङ्गतः इति श्रूयते । पुष्यशुक्लसप्तम्याम् अद्यत्वे अपि जयदेवस्य जयन्ती आचर्यते । राजा प्रतापरुद्रदेवः देवालयेषु गीतगोविन्दं गातव्यम् इति आदिष्टवान् ।

कवित्वम्

जयदेवः प्राचीनभारतीयकविषु अन्तिमः आधुनिककविषु आदिमः इति कथयितुं शक्यम् । संस्कृतकाव्यशैल्यां तेन बहवः नूतनाः आविष्काराः कृताः । भक्तिसाहित्यस्य उगमः अत्र दृश्यते । अयं कविः काव्यरचनायाः सर्वान् नियमान् न अपालयत् । अतः गीतगोविन्दकाव्यं शास्त्रीयकाव्यं न । अस्मिन् तेन नूतनशैली आधृता अस्ति या च तदीयकालानुगुणा अस्ति ।

गीतकाव्यमिदं भगवतः आराधनायै उद्दिष्टम् आसीत् । हरिस्मरणे मनो निरतं भवेत् । मनोनिरतिः आन्तरधर्मः आध्यात्मिकश्च । तत्स्मरणमेव शरणम् । ततोऽपि अवश्यं स्पृहणीयम् । कुतूहलं तु बाह्यमिति भौतिकम् । तदपि मनोधर्म एव । एवं स्मरणकुतूहलयोः साम्यं परिलक्ष्यते । एतत्सर्वमपि भावं मनसि निधाय निसर्गरमणीयं नितान्तं

Scanned with CamScanner

तादृशस्य अतिप्रसिद्धस्य पञ्चतन्त्रस्य रचयिता विष्णुशर्मा । विष्णुशर्मा काश्मीरदेशीय: । ब्राह्मणोऽयं श्रुतिस्मृतिपुराणेतिहासेषु कृतभूरिपरिश्रम: आसीत् । तस्य विषये श्रूयमाण: श्लोक: कश्चन एवमस्ति -

मनवे वाचस्पतये शुक्राय पराशराय ससुताय ।

चाणक्याय च विदुषे नमोऽस्तु नयशास्त्रकर्तृभ्य: ।।

सकलार्थशास्त्रसारं जगति समालोक्य विष्णुशर्मेदम् ।

तन्त्रै: पञ्चभिरेतच्चकार सुमनोहरं शास्त्रम् ।।

कालविचार:

क्रि.श. पञ्चमशतमाने विद्यमानस्य भर्तृहरे: सुभाषितेषु विद्यमाना: अनेके श्लोका: द्वित्रपदभेदेन पञ्चतन्त्रे दृश्यन्ते । क्रि श ५ ३ १ त: - ७ ९ पर्यन्तं पर्षियादेशं शासितवान् खुस्त्रु अनुशरिवान् इत्येतस्य आज्ञानुसारं आगैपेह्लविभाषया अयं ग्रन्थ: अनूदित: अस्ति । एतै: कारणै: विष्णुशर्मा अपि पञ्चमशतमाने भर्तृहरे: अनन्तरकाले आसीदिति वक्तुं शक्यते ।

फलश्रुति:

Scanned with CamScanner

मम्मटरुय्यकानन्तर अलङ्कार शास्त्रातिहास विश्वनाथस्य स्थानमस्ति । संस्कृतप्राकृतभाषा तिरिक्तमनेकेषां भाषाणां विदुषा विश्वनाथेन कविजागत्यपि ख्यातिरर्जिता । आलंकारिक-कापेक्षया विश्वनाथः श्रेष्ठः कविरप्यासीत् । उत्कलवशोत्पन्नः कवेश्चन्द्रशेखरस्यात्मज आसीत कविराजः । यथा स्वयमेव संकेतितम्

श्रीचन्द्रशेखरमहाकविन्द्रसूनुः श्रीनारायणोऽस्य प्रपितामह आसीत् यथा तत् प्राणत्वं च वृध्दिपितामह श्रीनारायणपादैरुक्तम् परं काव्यप्रकाशस्य भूमिकायां वामनाचार्येण काव्यप्रकाशदर्पणटीकायां श्रीनारायणः कविराजस्य पितामहः संकेतितः । यथा ज्यदाहु श्री कलिङ्गभूमण्डलाखण्डल महाराजाधिराज श्री नरसिंहदेव सभायां धर्मदत्तं स्थगयन्तः सकलहृदय गोष्ठी खगरिष्ठ कविपण्डितास्मद्पितामह श्री नारायणदासपादाः ।

अनेन प्रतीयते यत् विश्वनाथस्य पितामहः नारायणदासः महाराजनरसिंहदेवस्य सभायां बहुसम्मानितः आसीत् । विश्वनाथेन स्वं स्वजनकं च सन्धिविग्रहकौ संकेतितम् । अतः पितापुत्रौ कलिङ्गदेशस्य राजमन्त्रिणौ स्याताम् । काव्यप्रकाशस्य दीपिकाटीकाकारः चण्डीदत्तोऽस्य पितामहस्यानुजः आसीत् । कविराज उत्कलनिवासी प्रतीयते । यतोहि

Scanned with CamScanner

विश्वनाथस्य प्रकाशमाधिकृतालोचनायाः प्रत्यालोचना कृता दृश्यते । यस्यकालः १६०० तमे रिव्रष्टाब्दे स्वीक्रियते । कुमारस्वामिना रत्नार्पणे विश्वनाथस्य नामोल्लेखः कृतः । यस्य कालः पंचदश शताब्द्या मासीत् । अतो विश्वनाथः पंचदशशताब्द्यद्व पूर्ववर्ती खलु । अनेन प्रकारेण कृते विचारे विश्वनाथस्य स्थिति कालः त्रयोदशशता०द्याः उत्तरार्धे चतुर्दशशताब्द्याः पूर्वाध्दे निश्चीयते समालोचकैः ।

६.६ संस्कृत साहित्य में ओरिसन विद्वान

संस्कृत साहित्यक्षेत्रे ओरिसनस्य विदषां योगदान निन्दनीयः वर्तते। ते ज्ञानस्य विभिन्न शाखाः अर्थात् व्याकरणम् राजनीति शास्त्रम्, अर्थशास्त्रम्, काव्यशास्त्रम्, ज्योतिषशास्त्रम्, खगोल विज्ञानम् तन्त्रम, नृत्यम् संगीतम् वास्तुकला, अरिथमेटिक, भूगोलशास्त्रम व्यापार मार्गः भोगप्रथाः इत्यादिषु स्वस्थ्य उत्कृष्टतायाः प्रदर्शनम् अकुर्वन्। ते एतस्य अतिसृमद्धम् अकुर्वन। हलधर मिश्रः ओडिसायाः प्रख्यातः संस्कृत कविः आसीत् ये खुर्धायाः गजपति नरसिंहदेवः (1623-1647) तस्य समये वर्धन गौरवं च सञ्जातम्। बसन्तोत्सव महाकाव्येम् एवञ्च संगीता कल्पबलता अनयोः काव्ययो रचना तैः कृता। वसन्तोत्सव महाकाव्ये कारस्य वर्णनमस्ति। वसन्त वातावरणस्य समये भगवतः जगन्नाथस्य उत्सवः यः कारोत्सवेन सह गजपतिः नरसिम्हा देवेन प्रस्थापितम्। यः पारम्परिकरूपेण चन्द्रमासस्य आषाठोज्जवलं पखवाडस्य द्वितीय दिवसे मन्यन्ते। कृतेः आरम्भे कविः स्वसंरक्षक प्रिवारस्य एकः संक्षिप्त विवरण गजपतिः रामचन्द्र

Scanned with CamScanner

कर्विदिदिमा जीवदेवाचार्य: भक्ति भागवत महावाक्यं लिखितवान्। स: वत्स गोत्रस्य आसीत्। महाकाव्यस्य प्रारम्भे ते पुरूषोत्रमदेव: पर्यन्तं चोदगंगादेवत: उडीसाया: सम्राज: संक्षिप्त विवरण दत्रम् तस्य भक्ति वचनं कृष्ण मिश्रस्य प्रबोध चन्द्रोदयवत एक: रूपक: अस्ति। स: नायिकाया: नाम्नि शउषावतीश् नामक: एक नाटकमयि लि खितवान्। य: युधिष्ठिरस्य बल्यश्वस्य सुरक्षायाम् अर्जुन बाधा प्रापितवान् एवञ्च य: अन्ते नारद: एवञ्च श्री कृष्णस्य उपस्थितो अर्जुनेन सह विवाह: अभवत। जीवदेव: राजगुरू: त्रिलोचनाचार्य: एवञ्च रत्नावली अनयो: पुत्रमासीत्।

६.६ अभ्यास प्रश्न

१. संस्कृतगद्यवाङ्.मयपरिचय: व्याख्याति करोति।

२. चम्पूकाव्य: विवृणोति करोति।

३. जयदेव विवृणोति करोति।

४. विष्णुशर्मा व्याख्याति करोति।

❖❖❖

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner